समक्ष एच.एस. बेदी और स्वतंत्र कुमार, न्यायमूर्ति।

राजिंदर पाल सिंह - याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य - उत्तरदाताओं

2000 का सी.डब्ल्यू.पी. नंबर 16902

24 सितम्बर, 2003

भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद - 16, 226, 234 & 235— हरियाणा सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) नियम, 1951 (यथा संशोधित) - नियम -4, 7 और 8 - एच.सी.एस. (जे.बी.) के पदों पर नियुक्ति -सरकार, चयनित उम्मीदवारों की सूची को उच्च न्यायालय रजिस्टर में सूचीबद्ध करने और पोस्टिंग के लिए को भेजना - उच्च न्यायालय ने लिखित और मौखिक परीक्षा में कुल अंकों के 50% से कम अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों को नियुक्त नहीं करने का निर्णय लिया - राज्य न्यायिक सेवाओं में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए उच्च मानक प्रदान करने वाले उच्च न्यायालय के पत्र में न तो उच्च न्यायालय की ओर से अधिकार क्षेत्र और न ही क्षमता का अभाव था - ऐसी शर्त के लागू होने से पहले के नियम संशोधन करना आवश्यक नहीं है - हालांकि, इस तरह के प्रवर्तन के लिए एकमत एक शर्त है - राज्य सरकार उच्च न्यायालय के फैसले को स्वीकार नहीं कर रही है और चयनित उम्मीदवारों को नियुक्ति देने का निर्णय ले रही है - सरकार के रुख में कोई गलती नहीं है - याचिकाकर्ता उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित शर्त के प्रवर्तन के बिना नियमों द्वारा शासित होने के हकदार हैं क्योंकि इसे पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जा सकता है - न ही याचिकाएं लैचेस की दुर्बलता से पीड़ित है न ही याचिकाकर्ताओं का आचरण उन्हें राहत का दावा करने से वंचित करता है - राज्य सरकार को नियुक्ति के लिए याचिकाकर्ताओं के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया गया।

. यह अभिनिर्धारित किया गया कि लिखित और मौखिक परीक्षा में कुल अंकों का 50% प्राप्त करने की शर्त को लागू करने वाले उच्च न्यायालय के पत्र में किसी भी अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र या क्षमता का अभाव नहीं है। यह दुर्बलता उच्च न्यायालय के सुझाव को स्वीकार न करने और नीति के रूप में इसे कार्यान्वित करने में सरकार की निष्क्रियता के परिणामस्वरूप हुई है। वास्तव में वे उक्त पत्र की विषय-वस्तु के कार्यान्वयन पर विशिष्ट आपत्तियां उठाते हैं और राज्य द्वारा नियमों में संशोधन किए जाने से पहले दिन में बहुत देर हो चुकी थी। सर्वसम्मति की कमी वह कारण है जो कानून को याचिकाकर्ताओं के पक्ष में झुकाता है और संबंधित नियमों में विधायी संशोधनों की कमी नहीं है।

इसके अलावा, कहा गया है कि उक्त उच्च कट ऑफ केवल तभी बनाए रखा जा सकता है जब यह एक सर्वसम्मत दृष्टिकोण का परिणाम हो और नियमों के भाग 'सी' में नियमों के प्रावधानों के साथ संघर्ष में न हो। भाग 'डी' के प्रावधान एक अलग क्षेत्र में काम करते हैं और इसका उद्देश्य चयन के बजाय सेवा की शर्तों को प्रदान करना और कवर करना है। परिवीक्षा के दौरान तैनाती आदेश, प्रशिक्षण, इसकी अवधि, सेवा विशेष रूप से उच्च न्यायालय के नियंत्रण और पर्यवेक्षण के अंतर्गत आने वाले मामले हैं और राज्य सरकार इस संबंध में उच्च न्यायालय की राय से बाध्य है। लेकिन भाग 'डी' के तहत प्रावधान और शक्तियां भाग 'डी' के नियम 4 के संदर्भ में उच्च न्यायालय के रजिस्टर से पैनल से हटाए गए उम्मीदवारों की सीमा तक प्रभावित कर सकती हैं।

इसके अलावा, यह माना गया कि चयन की पूरी प्रक्रिया उच्च न्यायालय के आक्षेपित पत्र के जारी होने से पहले समाप्त हो गई थी। सभी प्रासंगिक समय पर, मौजूदा नियमों को कभी नहीं बदला गया था। उच्च न्यायालय के पत्र में निर्धारित शर्तों को लागू करने के परिणामों के बारे में संदेह भी सरकार द्वारा स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया गया था, जिसमें यह भी शामिल था कि इसके परिणामस्वरूप भेदभाव हो सकता है और नियमों का उल्लंघन होगा। हम सरकार के इस रुख में कोई दोष नहीं ढूंढ पा रहे हैं कि चूंकि कोई अन्य उम्मीदवार उपलब्ध नहीं था और रिक्तियां थीं, इसलिए सरकार ने चयनित उम्मीदवारों को नियुक्ति देने का निर्णय लिया था। उच्च न्यायालय ने पंजाब राज्य से संबंधित एक अन्य मामले में भी यही रुख अपनाया। संविधान के अनुच्छेद 234 में उल्लिखित संस्थागत घटकों की सर्वसम्मति का उद्देश्य कम से कम उन बैचों के लिए इस शर्त को लागू नहीं करना था। नियमों में संशोधन के बाद ये सभी प्रश्न निष्प्रभावी हो जाते हैं। इस प्रकार, इस पत्र को याचिकाकर्ताओं के हित के प्रतिकूल नहीं लिया जा सकता है, जिनके नाम सरकार द्वारा पत्र जारी करने से पहले उच्च न्यायालय रजिस्टर पर सूचीबद्ध करने के लिए भेजे गए थे।

आरके मलिक, 2000 के सीडब्ल्यूपी 16902 में याचिकाकर्ताओं के वकील।

2001 के सीडब्ल्यूपी 979 में याचिकाकर्ता के वकील अशीम राय के साथ वरिष्ठ अधिवक्ता पीएस पटवालिया।

हरि पाल वर्मा, 2001 के सीडब्ल्यूपी 4923 में याचिकाकर्ता के वकील।

राजबीर सहरावत, डीएजी, हरियाणा।

राजीव आत्मा राम, वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री मधु दयाल, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के लिए वकील।

एच.एन. मेहतानी, आयुक्त के अधिवक्ता।

एनडी अचिंत, एडवोकेट।

निर्णय

स्वतंत्र कुमार, न्यायमूर्ति

1. राज्य की न्यायिक सेवाओं में जिला न्यायाधीश के अलावा अन्य व्यक्तियों की नियुक्ति के संबंध में भारत के संविधान के अनुच्छेद 234 और 235 (जिसे बाद में संविधान के रूप में संदर्भित किया गया है) के तहत निर्दिष्ट त्रि-घटकों के अधिकार, कार्यप्रणाली और परामर्श का दायरा और दायरा निरंतर बहस का विषय रहा है। जिसने देश के न्यायिक पदानुक्रम में विभिन्न अदालतों से नियमित अंतराल पर फैसले आमंत्रित किए। हालांकि, ये रिट याचिकाएं फिर से वही मुद्दे उठाती हैं, इस संबंध में कि राज्य न्यायिक सेवाओं में चयन और नियुक्ति की प्रक्रिया में शामिल तीन घटकों में उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को किस हद तक वरीयता मिलनी चाहिए। इस संबंध में अदालतों का दृष्टिकोण शांत रहा है। हालांकि, नियुक्ति के क्षेत्र और सेवा की शर्तों पर लागू नियमों के विभिन्न संशोधनों से उत्पन्न होने वाली लगातार मुकदमेबाजी के कारण, इसने उस संबंध में कानून के सामान्य सिद्धांत को निर्धारित करने के बजाय एक अज्ञातहेतुक स्थिति प्राप्त कर ली है।

2. कानून अनिवार्य रूप से परिवर्तनशील है और जहां समाज की आवश्यकता और उसके द्वारा नियंत्रित प्रणाली की आवश्यकता है, न्याय के उचित प्रशासन की पूर्व-आवश्यकता न्यायपालिका की स्वतंत्रता है, जिसे न्यायिक प्रणाली के जमीनी स्तर पर प्राप्त किया जा सकता है। प्रवेश परीक्षा या चयन प्रक्रिया के अन्य स्तर में प्रदर्शन और क्षमता के उच्च मानक के निर्धारण को किसी भी तरह से कानून के समक्ष समानता या समान व्यवहार का उल्लंघन नहीं माना जा सकता है। इसके अलावा, जिस प्रासंगिक प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि कौन सा इन तीन घटकों में से एक को ऐसे मानक निर्धारित करने का अधिकार है और प्राधिकारियों द्वारा अपनाई जाने वाली सही प्रक्रिया क्या है जिसके परिणामस्वरूप कानून

के उद्देश्य के अनुरूप उपयुक्त अधिसूचना जारी की जाएगी और उसका कार्यान्वयन किया जाएगा।

3. हाल ही में दिए गए एक फैसले (पांच न्यायाधीशों की पीठ के) में, बिहार राज्य और एक अन्य बनाम बाल मुकंद साह और अन्य (1) माननीय सर्वोच्च न्यायालय के मामले में, न्यायपालिका की स्वतंत्रता और उच्च न्यायालय की शक्ति और संविधान के अनुच्छेद 234 और 235 के तहत अनिवार्य रूप से उल्लिखित अवयवों/अनिवार्य रूप से अनुपालन का उल्लेख करते हुए, निम्नानुसार आयोजित किया गया।—

पहले इस विवाद को इंगित करता है। जहां तक डा धवन का यह निवेदन है कि अनुच्छेद 235 का दूसरा भाग, जिला न्यायपालिका का पूर्ण नियंत्रण उच्च न्यायालय में निहित होने के बावजूद, अनुच्छेद 309 के तहत उपयुक्त प्रावधानों को अधिनियमित करने की अनुमति देता है, कोई वास्तविक सहायता नहीं हो सकती है, जैसा कि हमने ऊपर देखा है, अनुच्छेद 235 का दूसरा भाग अन्य शर्तों के विषय से संबंधित है। .(ख) अनुच्छेद 309 के अधीन कार्य करने वाले प्राधिकारियों द्वारा अधिनियमित उपयुक्त विधान द्वारा न्यायिक अधिकारियों को दी जाने वाली अपील के अधिकार सहित सेवा का अधिकार, लेकिन यह अधीनस्थ न्यायपालिका के पिरामिड के दूसरे स्तर पर अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग द्वारा अनुमत सीमित क्षेत्र पर प्रचालन है और इससे अधिक कुछ नहीं। डॉ. धवन सही थे जब उन्होंने तर्क दिया कि अनुच्छेद 233 से 235 की योजना पर ऐसा नहीं है कि अन्य कानून पूरी तरह से वर्जित हैं। हालांकि, उक्त निवेदन इस तथ्य की अनदेखी करता है कि यह अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग द्वारा सेवा की शर्तों के अनुमेय विनियमन के बारे में निर्धारित सीमित क्षेत्र है जो इसके उपयुक्त अधिकारियों के माध्यम से अनुच्छेद 309 के संचालन के लिए आरक्षित है। लेकिन, इस सीमित पहलू को छोड़कर, जिसकी अनुमति है, शेष नियंत्रण अनुच्छेद 235 के प्रथम भाग के अंतर्गत पूरी तरह से उच्च न्यायालय में निहित है। अनुच्छेद 235 द्वारा अनुमत वस्तु को संविधान निर्माताओं द्वारा अनुच्छेद 309 के तहत विधायिका या राज्यपाल को

सौंपी गई व्यापक शक्ति के रूप में नहीं माना जा सकता है, जो भर्ती को नियंत्रित करने वाली संवैधानिक योजना के पूर्ण जाल को बाधित करता है ।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 233 और 234 के तहत जिला न्यायपालिका और अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्ति। इन दोनों अनुच्छेदों में अनुच्छेद 309 के संचालन के लिए सीमित स्वतंत्र क्षेत्र की भी परिकल्पना नहीं की गई है जैसा कि अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग द्वारा अनुमत है। यह संविधान निर्माताओं की स्पष्ट मंशा को दर्शाता है कि जहां तक जिला न्यायाधीशों और अधीनस्थ न्यायपालिका के न्यायाधीशों के संवर्ग में उपलब्ध रिक्तियों पर भर्ती और नियुक्ति का प्रश्न है, न तो विधायिका और न ही राज्यपाल, उच्च न्यायालय के साथ कोई परामर्श करने के लिए, कोई स्वतंत्र बात कह सकते हैं।

4. डॉ. धवन ने आगे तर्क दिया कि अनुच्छेद 233 की स्पष्ट भाषा में, केवल राज्यपाल की नियम बनाने की शक्ति बंधी हुई है, न कि राज्य की विधायी शक्ति। यह दलील गलत है क्योंकि विधायी शक्ति राज्यपाल शासन लगाने की शक्ति के साथ मेल खाती है। लोक सेवा के सदस्यों की सेवा की शर्तों को विनियमित करने के लिए, जैसा कि अनुच्छेद 309 के परंतुक से पता चलता है, विधायिका उसमें उल्लिखित विषय के संबंध में क्या अधिनियमित कर सकती है, राज्यपाल द्वारा अपने नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करते हुए एक स्टॉप-गैप व्यवस्था के रूप में किया जा सकता है जब तक कि वही क्षेत्र वैधानिक अधिनियमन द्वारा कवर नहीं किया जाता है। इस प्रकार निर्धारित क्षेत्र समान है, अर्थात् राज्य लोक सेवा के कर्मचारियों की सेवा की शर्तें लोक सेवा के कर्मचारी एक जीनस हैं जिनमें से न्यायिक सेवा के सदस्य एक प्रजाति हैं। जहां तक न्यायिक सेवा में नियुक्ति का संबंध है, उक्त विषय अनुच्छेद 309 के सामान्य स्वीप से इसके शुरुआती भाग में शब्दों के कारण बनाया गया है, जिसे अनुच्छेद 233 और 234 के साथ पढ़ा गया है। इस संबंध में राज्यपाल के शासन बनाने की शक्ति को अनुच्छेद 234 के तहत अलग से निपटाया जाता है और यह उसमें निर्धारित प्रोडिक्योर है जो राज्यपाल की उक्त

नियम बनाने की शक्ति को नियंत्रित करेगा और इसे आकर्षित नहीं कर सकता है।

अनुच्छेद 309 से स्वतंत्र रूप से कोई भी भरण-पोषण जो न्यायिक सेवा के सदस्यों के संबंध में अपनी शर्तों में बाहर रखा गया है। इसलिए, अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग में पाए गए न्यायिक अधिकारियों की सेवा की शर्तों की अस्वीकृत और खुली श्रेणियों से निपटने के लिए विधायिका के पास उपलब्ध सीमित भूमिका को जमीनी स्तर पर भी अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों की नियुक्ति की विधि को निहितार्थ करके भी शासन करने के लिए पीछे नहीं पढ़ा जा सकता है। इस प्रयोजन राथ अनुच्छेद 234 संबंधित संवैधानिक प्राधिकारी को उपलब्ध शक्ति का एकमात्र भंडार है जिसे उसमें निर्धारित प्रक्रिया के पहलुओं का पालन करना होता है। डॉ. धवन ने यह कहते हुए स्थिति को बचाने की कोशिश की कि यदि यह दृष्टिकोण लिया जाता है, तो सबसे बड़ी विसंगति जो उत्पन्न होगी, वह यह है कि अनुच्छेद 234 के अनुसार विधायी हस्तक्षेप को पूरी तरह से हटा दिया जाएगा। अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग में उल्लिखित विषय पर विधायी शक्ति का निश्चित अनुमेय हस्तक्षेप होगा। जहां तक अनुच्छेद 233 के तहत जिला न्यायाधीशों की नियुक्तियों का संबंध है, विधायी हस्तक्षेप को बिल्कुल भी स्पष्ट रूप से खारिज नहीं किया गया है। इसलिए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि एक पूरी तरह से विसंगतिपूर्ण स्थिति सामने आएगी क्योंकि जमीनी स्तर पर यानी न्यायपालिका की भर्ती और नियुक्ति को विनियमित करने के सबसे निचले स्तर पर, विधायी हस्तक्षेप को पूरी तरह से बाहर रखा जाएगा, जबकि शीर्ष स्तर पर यानी जिला स्तर पर विधायी हस्तक्षेप का कोई निष्कासन नहीं होगा। यहां तक कि निराशा के इस तर्क को इस साधारण कारण से स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि जिला न्यायालय स्तर पर जिला न्यायपालिका में सीधी भर्ती के विषय पर, यहां तक कि मुंसिफ और सिविल जजों-जूनियर डिवीजन या सीनियर डिवीजन के जमीनी स्तर पर, जैसा भी मामला हो, अनुच्छेद 234 के साथ-साथ अनुच्छेद 233 के तहत राज्य विधानमंडल द्वारा हस्तक्षेप को पूरी तरह से बाहर रखा गया है। यदि अधीनस्थ न्यायपालिका में जमीनी स्तर पर नियुक्तियों को अधीनस्थ न्यायपालिका के पिरामिड में आधार स्तर संख्या 1 के रूप में लिया जाता है, जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, तो अनुच्छेद

234 की स्पष्ट भाषा एक पूर्ण प्रक्रिया निर्धारित करती है जिसे विधायिका जैसी किसी भी बाहरी एजेंसी द्वारा छेड़छाड़ नहीं की जा सकती है। सेवा शर्तों को विनियमित करने के लिए यह केवल उसी अनुच्छेद द्वारा इंगित अनुमेय क्षेत्र के कारण है कि अनुच्छेद 309 के तहत राज्यपाल या यहां तक कि राज्य विधानमंडल को भी उस क्षेत्र में काम करने की अनुमति दी जा सकती है। जबकि अधीनस्थ न्यायपालिका के पिरामिड के शीर्ष स्तर पर, जो स्तर संख्या 3 है, जिला न्यायाधीशों की भर्ती के लिए अनुच्छेद 233 द्वारा एक पूर्ण संहिता प्रस्तुत की जाती है, जिसमें बाहरी हस्तक्षेप को छोड़कर, जैसा कि पहले बताया गया है। इस प्रकार न तो आधार स्तर पर अर्थात अधीनस्थ न्यायपालिका के प्रवेश बिंदु को नियंत्रित करने के जमीनी स्तर पर और न ही जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए पिरामिड के शीर्ष स्तर पर प्रवेश बिंदु पर किसी राज्य विधानमंडल के हस्तक्षेप पर विचार किया जाता है। इसके विपरीत, यह आवश्यक निहितार्थ द्वारा उल्लंघन-संकेत ति है। इस प्रकार, न तो पहले स्तर पर और न ही तीसरे स्तर पर, अधीनस्थ न्यायपालिका में प्रवेश बिंदुओं से संबंधित, राज्य विधानमंडल की कोई भूमिका है और दूसरे स्तर पर उसी अनुच्छेद 235 के दूसरे भाग द्वारा अनुमत सीमा तक उसका सीमित अधिकार है और जो भर्ती या नियुक्तियों से संबंधित नहीं है। इस प्रकार, इसका अर्थ यह नहीं है कि इस सीमित स्वतंत्र कार्य के कारण अनुच्छेद 309 के तहत दूसरे स्तर पर कार्यरत प्राधिकारियों के लिए न्यायपालिका के उन कर्मचारियों की सेवा शर्तों को विनियमित करने के लिए नियम या विधान बनाने के लिए संयुक्त रूप से स्वतंत्र भूमिका उपलब्ध है, जो पहले ही जमीनी स्तर पर न्यायिक सेवा में प्रवेश कर चुके हैं। या यहां तक कि जिला स्तर पर भी, कोई भी विसंगतिपूर्ण स्थिति उभरती है।

ऐसे मामलों में जहां उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद आरक्षण दिया जाता है, स्थिति पूरी तरह से एक अलग स्तर पर खड़ी होती है क्योंकि उच्च न्यायालय स्वयं अनुच्छेद 234 के तहत या उसके लिए नियम बनाने वाले प्राधिकरण से सहमत होता है।

अनुच्छेद 233 के तहत एक कैडर में पहले से ही सृजित पदों में निर्धारित रिक्तियों पर आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों की सिफारिश करने का मामला। लेकिन सवाल यह है कि क्या उच्च न्यायालय को दरकिनार करते हुए इस तरह का अधिकार राज्य विधानमंडल द्वारा

या अनुच्छेद 309 के तहत राज्यपाल द्वारा लिया जा सकता है। जैसा कि पहले देखा गया है, इस तरह की कवायद को प्रासंगिक संवैधानिक योजना द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है। इस तर्क से सहमत होना भी संभव नहीं है कि विधायिका द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के स्पष्ट बहिष्करण के अभाव में, विधायी शक्ति अनुच्छेद 233 और 234 * से अछूती रहती है, इसके विपरीत, जैसा कि पहले अनुच्छेद 309 के साथ-साथ अनुच्छेद 245 के शुरुआती शब्दों के कारण देखा गया है, अनुच्छेद 233 और 234 द्वारा प्रदान किया गया प्रावधान पूर्ण है . । कोड। जिसे उच्च न्यायालय के परामर्श से या तो विधायिका या नियम बनाने वाले प्राधिकारी द्वारा स्वतंत्र रूप से नहीं छुआ जा सकता है। रिलायंस ने एमएम गुप्ता और अन्य के मामले में पैरा 16 और 17 में टिप्पणियों को रखा। आदि बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य। (सुप्रा) इस आशय का कि नियुक्ति प्राधिकारी राज्यपाल भी मामले को आगे नहीं बढ़ा सकता है या श्री द्विवेदी इस साधारण कारण से कि अनुच्छेद 234 और 233 की योजना के तहत एक बार उच्च न्यायालय के साथ प्रभावी परामर्श किया जाता है और अनुच्छेद 234 के अनुसार नियम बनाए जाते हैं और चयन इन नियमों के अनुसार किया जाता है या जब उच्च न्यायालय अनुच्छेद 233 के तहत नियुक्तियों की सिफारिश करता है, चयन प्रक्रिया . समाप्त हो गई है, केवल वास्तविक नियुक्ति आदेश जारी करने का मंत्रिस्तरीय कार्य राज्यपाल द्वारा किया जा सकता है। लेकिन यह किसी भी मामले में न्यायपालिका की स्वतंत्रता और उच्च न्यायालय की शक्ति में हस्तक्षेप नहीं करेगा, राज्यपाल, उच्च न्यायालय और लोक सेवा आयोग के परामर्श से नियम बनाते समय अनुच्छेद 234 के अनुसार कार्य करते हुए और अनुच्छेद 233 के तहत उच्च न्यायालय की सिफारिश पर कार्य करते हुए, केवल चयनकर्ताओं को वास्तविक नियुक्ति आदेश जारी करने का अंतिम कार्य करता है लेकिन ये चयनित प्रक्रिया से गुजर चुके होते हैं। अनुच्छेद 233 (2) के अनुसार उच्च न्यायालय द्वारा फ़िल्टर या उसके द्वारा शासित मामलों में अनुच्छेद 234, उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद, उस अनुच्छेद के तहत बनाए गए नियमों में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार। ऐसा नहीं है कि मंत्रिपरिषद या विधायिका के पास उच्च न्यायालय को पारित करके इस संबंध में राज्यपाल से कहने के लिए स्वतंत्र रूप से कुछ है। शमशेर सिंह आदि बनाम पंजाब राज्य और अन्य आदि के मामले का संदर्भ एआईआर 1974 एससी 2192 जिस विवादास्पद प्रश्न से हम संबंधित हैं, उस विवादास्पद प्रश्न पर विचार करते समय पूरी तरह से मुद्दा है। अनुच्छेद 233 से 235 की योजना पर श्री द्विवेदी के इस तर्क की सराहना करना कठिन है कि

भर्ती प्रक्रिया उच्च न्यायालय के परामर्श के बिना विधायी अधिनियमन या अनुच्छेद 309 के तहत नियमों द्वारा निर्धारित की जा सकती है। श्री द्विवेदी का यह तर्क कि शासन की संसदीय प्रणाली भी संविधान की एक बुनियादी विशेषता है, उनके मामले को इस साधारण कारण से आगे नहीं बढ़ा सकता है कि अनुच्छेद 235 को अनुच्छेद 309 के साथ पढ़ा जाता है, जहां तक जिला न्यायपालिका और अधीनस्थ न्यायपालिका में भर्ती और नियुक्ति के विषयों का संबंध है, जो अनुच्छेद 233 और 235 की पूर्ण संहिता द्वारा कवर किए जा रहे हैं। जैसा कि पहले देखा गया है"।

(5) उपरोक्त निर्णय ने न केवल हरियाणा राज्य बनाम सुभाष चंद्र मारवाह और अन्य (2) के मामले में न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून की अनुमोदन के साथ पुन: पुष्टि की, बल्कि उच्च न्यायालय के नियंत्रण और अधिकार का भी विस्तार किया। तथापि, संविधान के अनुच्छेद 234 और 235 के संवैधानिक उपबंधों के दायरे के संबंध में मूल विशेषताएं उसी राज्य से संबंधित नियमों के उपबंधों से संबंधित हैं जिनसे हम वर्तमान मामले में संबंधित हैं। न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:—

"....एक बार जब राज्य सरकार ने सूची के अनुसार उम्मीदवारों के नामों का चयन कर लिया है, तो नियुक्ति के लिए इस तरह के चयन को उच्च न्यायालय को सूचित किया जाता है और नियुक्ति के लिए सरकार द्वारा इस तरह से चुने गए उम्मीदवारों को चयन के क्रम में एक रजिस्टर में उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किया जाना है। स्पष्टतः

(2) 1973 (2) एसएलआर 137

रजिस्टर उच्च न्यायालय द्वारा रखा जाना है क्योंकि उच्च न्यायालय अपनी प्रशासनिक क्षमता में जानता है कि कौन सी रिक्तियां हुई हैं और वे कौन से न्यायालय हैं जिनमें नियुक्तियां की जानी हैं। सेवा नियमावली लोक सेवा आयोग और उच्च न्यायालय के परामर्श से बनाई गई है और; इसलिए, वे सभी के लिए बाध्यकारी हैं। वे दिखाते हैं कि अधीनस्थ न्यायाधीश के पद पर उम्मीदवार की नियुक्ति के लिए भाग सी में नियम 11 के अनुसार चिकित्सा परीक्षा के अलावा परीक्षा अंतिम परीक्षा है और एक बार लोक सेवा

आयोग द्वारा मेरिट के क्रम में सख्ती से सूची तैयार किए जाने के बाद, न तो लोक सेवा आयोग और न ही राज्य और न ही उच्च न्यायालय सूची में दिए गए योग्यता के क्रम से हट सकते हैं, सिवाय इसके कि जहां आरक्षण दिया गया है। नियम 10 (ii) के अनुसार पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के पक्ष में बनाया गया है।

(6) फिर भी एक अन्य मामले (तीन न्यायाधीशों की पीठ के) जिसका शीर्षक राम भगत सिंह और दूसरा बनाम हरियाणा राज्य और एक अन्य (3) है, में न्यायालय ने उचित विवेक और संबंधित प्राधिकारी द्वारा सुविचारित निष्कर्ष पर पहुंचने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि

> "....यह देखने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए कि कहां असमान प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं, छूट या अन्यथा द्वारा स्थितियां बनाई जानी चाहिए ताकि राज्य की नौकरियों और रोजगारों के संबंध में अन्य लोगों के साथ समानता के मामले में असमान प्रतिस्पर्धा कर सकें। हमारा संविधान इसे ऐसा ही बताता है। संविधान के अनुच्छेद 38 को अनुच्छेद 14, 15 और 16 के साथ पढ़ा जाता है। इसलिए, उन लोगों को देने के लिए जो असमान हैं, और यह स्वीकार किया जाता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति, ऐतिहासिक या अन्यथा, सार्वजनिक रोजगार के लिए योग्यता और योग्यता के संबंध में समुदाय के सामान्य सदस्यों के साथ असमान हैं। इसलिए, असमानता ओं को समानता की शर्तों पर प्रतिस्पर्धा करने के लिए कुछ छूट और समानता सुनिश्चित करने वाले अन्य कारक अनिवार्य हैं। समाज के वे समूह या वर्ग जो कारणों से हैं

(3) 1990 (2) आर.एस.जे.

> इतिहास के अनुसार या अन्यथा समाज में अन्य समुदायों या समूहों के सदस्यों के साथ पूर्ण समानता के संदर्भ में प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ, समानता के मामले में प्रतिस्पर्धा करने की सुनिश्चित और सुनिश्चित संभावनाएं सुनिश्चित की जानी चाहिए। उन्हें समान रूप से प्रतिस्पर्धा करने में मदद की जानी चाहिए,

लेकिन इस बात पर जोर देना महत्वपूर्ण है कि सार्वजनिक सेवाओं या रोजगार के लिए अवसर की समानता हासिल करने की मांग की जाती है। प्रमुख विचार की उन सेवाओं की प्रभावकारिता और दक्षता। सार्वजनिक सेवाओं के लिए प्रतिस्पर्धा करने के लिए सभी के लिए समानता होनी चाहिए।

हम इस बात से अवगत हैं कि उच्च प्रभावकारिता की आवश्यकता है क्योंकि भर्ती न्यायिक शाखा में है, अर्थात्, भावी न्यायिक अधिकारियों के लिए जो देश में न्याय के प्रशासन के प्रभारी होंगे। लेकिन साथ ही, यदि संभव हो तो यह सुनिश्चित करने के लिए कि अवसर की समानता हो, एक प्रतिशत निर्धारित किया जाना चाहिए जो किसी भी तरह से नौकरी के लिए आवश्यक दक्षता के साथ समझौता किए बिना जो पिछड़े समुदायों, अर्थात् अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों द्वारा प्राप्त की जा सकती है। जब तक उपर्युक्त आधार पर ऐसा प्रतिशत निर्धारित नहीं किया जाता है और योग्यता के लिए एक प्रतिशत निर्धारित नहीं किया जाता है जो सामान्यत वस्तुनिष्ठ आधार पर निर्धारित अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति द्वारा अप्राप्य होगा, तब तक अवसर की समानता सुनिश्चित करना संभव नहीं होगा।

हमारी राय में, न्याय और हमारे संवैधानिक जनादेश के हित में और सेवाओं की दक्षता के प्रकाश में और न्याय की भावना पैदा करने की दृष्टि से, संबंधित सरकार के लिए इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक है कि प्रशासन के लिए आवश्यक अंकों का न्यूनतम प्रतिशत क्या होना चाहिए। हम निर्देश देते हैं कि सरकार हरियाणा में पद के लिए अगले चयन से पहले निष्पक्ष रूप से एक सचेत निर्णय लेगी।

न्यायिक सेवा दक्षता के अनुरूप अंकों का न्यूनतम प्रतिशत निर्धारित करती है और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए अवसर की समानता सुनिश्चित करने की आवश्यकता को सुनिश्चित करती है।

(7) इसके अलावा नीलिमा शांगला (मिस) पीएचडी उम्मीदवार बनाम हरियाणा राज्य (4) के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य की न्यायिक सेवाओं में चयन और नियुक्ति के संबंध में नियमों के गठन के तरीके और प्रक्रिया और उनके कार्यान्वयन को संदेह से परे घोषित किया।—

"लिखित और मौखिक परीक्षा में कुल 55 प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले सभी उम्मीदवारों को नियुक्ति के लिए योग्य माना जाता है, उनकी योग्यता को उनके द्वारा प्राप्त अंकों के अनुसार सख्ती से रोका जाता है। परीक्षा का परिणाम हरियाणा राजपत्र में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है और नियुक्ति के लिए चयन सख्ती से उसी क्रम में किया जाना है जिस क्रम में उन्हें सेवा आयोग द्वारा भाग-सी के नियम 8 के तहत योग्य उम्मीदवारों की सूची में रखा गया है। चयनित उम्मीदवारों के नाम उनके चयन के क्रम में उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए रजिस्टर में दर्ज किए जाने हैं और उस क्रम में रजिस्टर में दर्ज नामों से नियुक्तियां की जानी हैं। उच्च न्यायालय द्वारा रखे गए रजिस्टर में दर्ज किए जाने वाले नामों की संख्या परीक्षा के परिणामस्वरूप उम्मीदवारों के चयन की तारीख से दो साल के भीतर होने वाली रिक्तियों को भरने के लिए पर्याप्त हो सकती है।. इसलिए, ऐसा प्रतीत होता है कि लोक सेवा आयोग का कर्तव्य लिखित परीक्षा आयोजित करने, मौखिक परीक्षा आयोजित करने और लिखित और मौखिक परीक्षा के परिणामस्वरूप अर्हता प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों के बीच अंकों के अनुसार योग्यता के क्रम की व्यवस्था करने तक ही सीमित है। इसके बाद लोक सेवा आयोग को राजपत्र में परिणाम प्रकाशित करना और स्पष्ट रूप से, परिणाम सरकार

को उपलब्ध कराना आवश्यक है।. टी.एच. सार्वजनिक सेवा
आयोग को आगे कोई चयन करने की आवश्यकता नहीं है

योग्य उम्मीदवारों में से और इसलिए, किसी भी योग्य उम्मीदवारों के नामों को रोकने की उम्मीद नहीं है। लोक सेवा आयोग का कर्तव्य योग्यता के क्रम में व्यवस्थित किए गए योग्य उम्मीदवारों की पूरी सूची सरकार को उपलब्ध कराना है। तत्पश्चात् सरकार को चयन सख्ती से उसी क्रम में करना होता है जिस क्रम में उन्हें परीक्षा के परिणामस्वरूप आयोग द्वारा रखा गया है। चयनित उम्मीदवारों के नाम तब उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए रजिस्टर में दर्ज किए जाते हैं जो उस क्रम में सख्ती से दर्ज किए जाते हैं और उस रजिस्टर में दर्ज नामों से की गई नियुक्तियां भी उसी क्रम में सख्ती से की जाती हैं। निस्संदेह, यह सरकार के लिए खुला है कि वह वैध कारण से सभी रिक्तियों को न भरे। उदाहरण के लिए, सरकार और उच्च न्यायालय यह निर्णय ले सकते हैं कि यद्यपि न्यूनतम अर्हक अंक 55 प्रतिशत है, उच्च मानकों के हित में वे ऐसे किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं करेंगे जिसने 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त किए हों। हरियाणा राज्य बनाम सुहास चंद्र मारवाह और अन्य में कुछ ऐसा ही हुआ था। उस स्थिति में, हालांकि नियमों ने अधीनस्थ न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए योग्य होने के लिए कुल अंकों के न्यूनतम 45 प्रतिशत को निर्धारित किया था, उच्च न्यायालय और सरकार ने 55 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों को नियुक्त नहीं करने का फैसला किया। नतीजा यह हुआ कि हालांकि बड़ी संख्या में रिक्तियां थीं, लेकिन नियुक्ति के लिए केवल कुछ उम्मीदवारों का चयन किया गया था। चयन को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि योग्य उम्मीदवार उपलब्ध होने पर इसे इतना प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है। इस अदालत ने दलील को खारिज कर दिया और चयन को बरकरार रखा। हालांकि, जैसा कि हमने कहा, रिक्तियों की संख्या और योग्य उम्मीदवारों की उपलब्धता के बावजूद, चयन मनमाने ढंग से कुछ उम्मीदवारों तक सीमित नहीं किया जा सकता है। नियुक्ति के लिए चुने गए व्यक्तियों की संख्या को सीमित करने से पहले सरकार और उच्च न्यायालय के दिमाग का एक सचेत

अनुप्रयोग होना चाहिए। कोई अन्य व्याख्या भाग-डी के नियम 8 को अर्थहीन बना देगी। वर्तमान मामले में, हालांकि

नियमों के अनुसार लोक सेवा आयोग को परीक्षा परिणाम प्रकाशित करना था और जाहिर तौर पर, सरकार को परिणाम की सूचना देने के लिए भी, लोक सेवा आयोग ने पहली बार में परिणाम प्रकाशित नहीं किया और सरकार को केवल सामान्य श्रेणी से संबंधित 17 उम्मीदवारों के नाम भेजे, हालांकि कई और उत्तीर्ण हुए थे। यह गलत था। सभी अर्हता प्राप्त उम्मीदवारों के नाम सरकार को भेजे जाने थे। लोक सेवा आयोग द्वारा सरकार को अर्हता प्राप्त अभ्यथयों की पूरी सूची संप्रेषित न करने का कारण यह दिया गया है कि उन्हें मूल रूप से सूचित किया गया था कि केवल 28 रिक्तियां हैं। यह बिल्कुल भी ठोस कारण नहीं है। "हरियाणा में अधीनस्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित नियमों" के तहत, लोक सेवा आयोग रिक्तियों की संख्या से बिल्कुल भी चिंतित नहीं है। न ही इस आधार पर सफल उम्मीदवारों की पूरी सूची के बिना यह उम्मीद की जाती है कि केवल सीमित संख्या में रिक्तियां उपलब्ध हैं। हरियाणा सरकार ने यह रुख अपनाया है कि वे अधिक उम्मीदवारों का चयन करने और नियुक्त करने में असमर्थ थे क्योंकि लोक सेवा आयोग द्वारा केवल कुछ उम्मीदवारों के नाम उन्हें भेजे गए थे। अब यह पता चला है कि लोक सेवा आयोग द्वारा सरकार को अपनी संक्षिप्त सूची भेजे जाने से पहले ही उच्च न्यायालय ने सरकार को सूचित कर दिया था कि और अधिक रिक्तियां हैं जिन्हें भरने की आवश्यकता है। सरकार को यह नहीं पता था कि सेवा आयोग द्वारा अर्हता प्राप्त कई अभ्यथयों के नाम सरकार से रोक दिए गए हैं, इसलिए उसने सेवा आयोग को नए सिरे से प्रतियोगी परीक्षा आयोजित करने के लिए पत्र लिखा। यदि सरकार को इस बात की जानकारी होती कि योग्य उम्मीदवार उपलब्ध हैं, तो उन्होंने निश्चित रूप से नियम 8 या भाग-घ लागू किया होगा और उच्च न्यायालय को सूचित करने के लिए आवश्यक चयन किया होगा। कुल परिणाम यह है कि योग्य उम्मीदवार, हालांकि उपलब्ध हैं, का चयन नहीं किया गया था और उन्हें नियुक्त नहीं किया गया था। मिस नीलिमा शांगला

उनमें से एक हैं। यह विचार है कि हमने नियमों का पालन किया है। मिस नीलिमा शांगला किसके लिए चुने जाने की हकदार हैं?

हरियाणा सिविल सेवा (न्यायिक) शाखा में अधीनस्थ न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति। इस न्यायालय के अंतरिम आदेश से अधीनस्थ न्यायाधीश का एक पद उनके लिए रिक्त रखा गया है।

(8) माननीय उच्चतम न्यायालय के उपर्युक्त निर्णयों में सेवाओं में नियुक्ति को नियंत्रित करने वाले नियमों के संबंध में अंतिम निर्णय लेने की प्रक्रिया में प्रत्येक घटक की शक्ति के दायरे और भूमिका के संबंध में एक स्पष्ट कानून प्रतिपादित किया गया है। राज्य की न्यायिक सेवाओं में व्यक्तियों का चयन और नियुक्ति अनिवार्य रूप से बनाए गए नियमों और पूर्व-प्रमुख संवैधानिक प्रावधानों (संविधान के अनुच्छेद 234 और 235 के तहत) के अनुरूप होनी चाहिए। हरियाणा राज्य ने हरियाणा सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) नियम 1951 नामक नियम तैयार किए, जो कम से कम 22 अवसरों पर विभिन्न संशोधनों के अधीन रहा है। वर्तमान मामले में, हम उक्त नियमों से चिंतित होंगे जैसा कि वे 1997 में थे। मुख्य रूप से, हम। मैं उक्त नियमों से संबंधित हूं क्योंकि उन्हें टीआईजेएल 1997 में संशोधित किया गया था, जैसा कि माना जाता है कि ये हमारे समक्ष विचाराधीन नियुक्तियों पर लागू नियम थे।

(9) कानून के उपर्युक्त सिद्धांत का अनिवार्य परिणाम और अनूठा परिणाम यह है कि नियुक्ति करने और नियम बनाने की सरकार की शक्ति स्पष्ट संवैधानिक निर्देश द्वारा नियंत्रित होती है कि ऐसे नियम राज्य लोक सेवा आयोग और ऐसे राज्य के संबंध में अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने वाले उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद तैयार किए जाएंगे। आयोग की भूमिका मुख्य रूप से परीक्षा आयोजित करने, मौखिक परीक्षा और मेरिट सूची तैयार करने के संबंध में है। उच्च न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह उस स्तर पर मौखिक परीक्षा में एक निर्धारित और प्रभावी भूमिका निभाए जब उम्मीदवार को नियमों के नियम 4 भाग सी के संदर्भ में मौखिक परीक्षा के अधीन किया जाता है। उपयुक्तता के संबंध में चयन समिति के सदस्य न्यायाधीश की राय को तब तक नजरअंदाज नहीं किया जा सकता जब तक कि रिकॉर्ड द्वारा समर्थित मजबूत ठोस कारण न हो। यहां तक कि उस स्थिति में भी इस तरह के दृष्टिकोण की गैर-स्वीकृति को लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए। इसके बाद, सरकार सत्यापन आदि के प्रशासनिक कार्य करती है और उसे उच्च न्यायालय को सूची भेजनी होती है। इसके बाद उच्च न्यायालय को चयनित उम्मीदवारों के नाम को योग्यता के क्रम में और अपनी संतुष्टि के

अधीन उसके द्वारा बनाए गए रजिस्टर पर रखना है और यदि उम्मीदवारों का नाम उच्च न्यायालय द्वारा रजिस्टर से नहीं हटाया जाता है, तो चयनित उम्मीदवारों की नियुक्ति के लिए राज्य सरकार को सिफारिश करें, उपलब्ध रिक्तियों के आधार पर। उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण पर विशेष जोर देने के साथ तीन घटकों के बीच प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण परामर्श, क्योंकि यह एकमात्र प्राधिकरण है, जिसका संविधान के अनुच्छेद 235 और सेवा की शर्तों के संदर्भ में अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण है। उच्च न्यायालय के सुझाव को निश्चित प्राथमिकता देने के साथ तीनों प्राधिकरणों का सामूहिक ज्ञान नियम बनाने, न्यायिक सेवाओं में व्यक्तियों के चयन और नियुक्तियों को नियंत्रित करने के लिए दुर्जेय आधार प्रतीत होता है। उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को एक विशेषज्ञ निकाय की तुलना में भी उच्च स्तर पर रखा जाना चाहिए क्योंकि एक ओर, उच्च न्यायालय नियमों, विनियमों के निर्माण और उम्मीदवारों के चयन में प्रभावी ढंग से भाग लेता है, जबकि दूसरी ओर, यह राज्य में न्यायिक सेवाओं के कामकाज की जमीनी स्तर से लेकर राज्य में निर्णयों की सर्वोच्च अंतिमता तक निगरानी करता है। उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण राज्यों में न्यायिक प्रशासन की व्यावहारिक वास्तविकताओं पर आधारित सोच की वस्तुनिष्ठ प्रक्रिया पर आधारित है। संवैधानिक अधिदेश को समुचित उपलब्धियों और कार्यान्वयन के लिए संबंधित घटकों द्वारा अपनाए जाने वाले प्रावधानों और कार्यप्रणाली की योजना इस प्रकार है और सेवा में उच्च मानक को प्राप्त करने और इष्टतम रखरखाव के लिए इस प्रकार बनाए गए नियमों का प्रवर्तन किया जाता है, जो जमीनी स्तर पर न्याय के प्रशासन के लिए जिम्मेदार है।

(10) इन रिट याचिकाओं में हमारे विचार के लिए उठने वाले कानून के बुनियादी प्रश्न के सिद्धांत पर विचार करने के बाद, अब हम मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स के संदर्भ में सहायक कानूनी प्रश्नों का उल्लेख करने के लिए आगे बढ़ेंगे।

(11) इन चार रिट याचिकाओं में, हम क्रमशः 1999 और 2000 के बैचों के लिए न्यायिक सेवाओं में याचिकाकर्ताओं के चयन और नियुक्तियों से संबंधित हैं।

(12)सबसे पहले, हम राजिंदरपाल सिंह के मामले में तथ्यों का उल्लेख करेंगे।

(13)हरियाणा लोक सेवा आयोग ने 15 मार्च, 1999 को हरियाणा सिविल सेवा न्यायिक शाखा के 23 पदों के लिए विज्ञापन जारी किया था। आवेदन जमा करने की अंतिम तिथि 15 अप्रैल, 1999 थी। तथापि, 27 मई, 1999 को आयुक्त ने एक शुद्धिपत्र जारी कर पदों की संख्या 23 से बढ़ाकर 46 कर दी, लेकिन आवेदन जमा करने की अंतिम तिथि 27 मई, 1999 ही रही। लिखित परीक्षा 30 जून, 1999 से 2 जुलाई, 1999 के बीच आयोजित की गई थी। परिणाम 29 अक्टूबर, 1999 को घोषित किया गया था और साक्षात्कार आयोजित करने के बाद, अंतिम परिणाम 27 दिसंबर, 1999 को घोषित किया गया था। याचिकाकर्ता सहित चयनित उम्मीदवारों के चरित्र सत्यापन और चिकित्सा औपचारिकताओं को जनवरी, 2000 में पूरा किया गया था। दिनांक 10 मार्च, 2000 के पत्र के माध्यम से सरकार ने उच्च न्यायालय रजिस्टर में सूचीबद्ध करने और ऐसे चयनित उम्मीदवारों को तैनात करने के लिए सूची उच्च न्यायालय को अग्रेषित कर दी। याचिकाकर्ता के अनुसार, मई, 2000 में, 24 व्यक्तियों को नियुक्त किया गया था, जबकि शेष चयनित उम्मीदवारों को इस कारण से नियुक्त नहीं किया गया था कि इस बीच, उच्च न्यायालय ने उन उम्मीदवारों को नियुक्त नहीं करने का निर्णय लिया था, जिन्होंने लिखित और मौखिक परीक्षा में कुल अंकों के 50% से कम अंक प्राप्त किए थे। उच्च न्यायालय के इस निर्णय के परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता को नियुक्ति पत्र जारी नहीं किया गया था और इस प्रकार उसने उच्च न्यायालय के फैसले को चुनौती देते हुए अदालत का दरवाजा खटखटाया और आगे राज्य सरकार और उच्च न्यायालय को याचिकाकर्ता की नियुक्ति और तैनाती आदेश जारी करने का निर्देश देने की प्रार्थना की।

(14)याचिकाकर्ता - राजिंदरपाल सिंह पिछड़ा वर्ग की आरक्षित श्रेणी से संबंधित हैं और उनके अनुसार कुल 46 पद विज्ञापित किए गए थे, जिनमें से 4 पद पिछड़े वर्ग के लिए, 12 अनुसूचित जाति श्रेणी के लिए, 3 पद पूर्व सैनिक के लिए, 2 पद हांडी कैप्ड के लिए और 25 पद सामान्य श्रेणी के लिए आरक्षित थे।

<u>2001 के सीडब्ल्यूपी संख्या 4923 के तथ्य</u>

(15)प्रवीण कुमार लाल के मामले के तथ्य कमोबेश राजिंदरपाल सिंह के मामले के तथ्यों से मिलते-जुलते हैं, सिवाय इसके कि वह 1999 बैच के लिए सामान्य श्रेणी से संबंधित उम्मीदवार थे, जबकि राजिंदरपाल पिछड़ा वर्ग श्रेणी के उम्मीदवार थे।

2001<u>के सीडब्ल्यूपी नंबर 979 के तथ्य</u>

(16) महेश कुमार 2000 बैच के उम्मीदवार थे। इस मामले में आयोग द्वारा 12 मार्च, 2000 को विज्ञापन जारी किया गया था जिसमें हरियाणा सिविल सेवा में 12 रिक्तियों को भरने का इरादा था।
(न्यायिक शाखा)। लिखित परीक्षा 21 से 25 मई, 2000 के दौरान आयोजित की गई थी। याचिकाकर्ता सहित उम्मीदवारों को 20 जुलाई, 2000 को साक्षात्कार के लिए बुलाया गया था, याचिकाकर्ता का दावा है कि उसने 900 में से 469 अंक प्राप्त किए हैं और इस तरह याचिकाकर्ता अनुसूचित जाति ए श्रेणी की श्रेणी के तहत नियुक्ति का हकदार बन गया।

याचिकाकर्ता को राज्य सरकार द्वारा 5 अगस्त, 2000 को अग्रेषित किया गया था। याचिकाकर्ता का चरित्र पूर्ववर्ती और चिकित्सा परीक्षण 1 सितंबर, 2000 तक पूरा हो गया था और उसकी सिफारिश की गई थी। याचिकाकर्ता को उच्च न्यायालय के निर्णय के मद्देनजर नियुक्ति और पोस्टिंग का पत्र जारी नहीं किया गया था, क्योंकि याचिकाकर्ता उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित मानक का 50% बनाने में एक अंक कम पड़ गया था। इसने याचिकाकर्ता को 2000 के बैच के संबंध में रिट याचिका का शीर्षक देने के लिए मजबूर किया।

(17)2001 की सिविल रिट याचिका संख्या 19940 बलवंत सिंह के तथ्य कुछ हद तक महेश कुमार के मामले से मिलते-जुलते हैं।

(18)नोटिस पर आयोग और राज्य सरकार ने अपने-अपने लिखित वक्तव्य दाखिल किए। राज्य सरकार अपने इस रुख से सहमत है कि उच्च न्यायालय का निर्णय याचिकाकर्ता के विरुद्ध नहीं है। हरियाणा Government, लोक सेवा आयोग की सिफारिश प्राप्त करने और सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद, राज्य सरकार ने मौजूदा नियमों के आधार पर 31 उम्मीदवारों को नियुक्त किया था और उच्च न्यायालय से उनके पोस्टिन आदेश जारी करने का अनुरोध किया गया था। बाद में दो और उम्मीदवारों को नियुक्त किया गया और याचिकाकर्ता राजिन.दरपाल सिंह पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित पद के खिलाफ मेरिट सूची में 25 वें स्थान पर हैं। तथापि, दिनांक 5 मई, 2003 के पत्र के माध्यम से पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार ने राज्य प्रशासन को न्यायिक सेवाओं में उन अभ्यथयों की नियुक्ति न करने के उच्च न्यायालय के निर्णय के बारे में सूचित किया था जिन्होंने लिखित और मौखिक परीक्षा में कुल मिलाकर 50% से कम अंक प्राप्त किए हैं, जब तक कि कोई ठोस कारण न हो। राज्य सरकार ने उच्च न्यायालय से दिनांक 20 जून, 2000 के पत्र के माध्यम से अपने निर्णय पर पुनवचार करने का अनुरोध किया जिसे स्वीकार नहीं किया गया और दिनांक 20 जुलाई, 2000 के पत्र के माध्यम से उच्च न्यायालय ने सरकार के साथ-साथ हरियाणा लोक सेवा आयोग को उच्च न्यायालय के निर्णय से अवगत कराते हुए अपना रुख दोहराया।

(19)जैसा कि उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है, इन रिट याचिकाओं में चुनौती उच्च न्यायालय के दिनांक 20 जुलाई, 2000 के पत्र को दी गई है। इस प्रकार निम्नलिखित की सामग्री को संदर्भित करना उचित होगा?

उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार द्वारा राज्य प्रशासन के साथ-साथ आयोग को भेजा गया पत्र:—

"नंबर 441 गज 1/वी 1। E34

निर्मल यादव,
रजिस्ट्रार, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़।

श्री एल.डी. मेहता, अध्यक्ष, हरियाणा लोक
सेवा आयोग, चंडीगढ़।

दिनांक 20 जुलाई, 2000।

रेफरी, :—H.C.S. (न्यायिक)

रेफरी: आपका डीडी। एचपीएससी (पीए) -2डब्ल्यूआईओ, दिनांक 20 जुलाई, 2000।

माननीय मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीशों को यह निर्णय लेते हुए प्रसन्नता हो रही है कि एक उम्मीदवार जिसने लिखित परीक्षा और मौखिक परीक्षा के कुल योग में 50% से कम अंक प्राप्त किए हैं, उसे एचसीएस (न्यायिक शाखा) में नियुक्त नहीं किया जा सकता है जब तक कि मानक को कम करने के लिए बहुत ही बाध्यकारी कारण न हों।

(Sd.) . . .,

रजिस्टर करें."

(20) संबंधित याचिकाकर्ताओं की ओर से पेश विद्वान वकील द्वारा आक्षेपित पत्र को चुनौती देना, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित आधारों पर है कि:—

a. उच्च न्यायालय का दिनांक 20 जुलाई, 2000 का निर्णय संबंधित नियमों में एकतरफा संशोधन के समान है, जो संविधान के अनुच्छेद 234 के अंतर्गत अनुचित है। लिखित और मौखिक परीक्षा में 50% अंक प्राप्त करने की शर्त लगाने से याचिकाकर्ता को नियुक्ति के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है, जो उसने उनके

पक्ष में अर्जित किया है, क्योंकि नियम प्रासंगिक समय पर कानूनी रूप से लागू होते हैं।

b. उच्च न्यायालय के निर्णय को सरकार द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था और इसे आगे बढ़ाने के लिए कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई थी;

c. न्यायालय के समक्ष सरकार और आयोग का रुख किसी भी मामले में उच्च न्यायालय के रुख के विपरीत है, उच्च न्यायालय के दिनांक 20 जुलाई, 2000 के एकतरफा निर्णय का पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं हो सकता है;

d. निर्णय के प्रवर्तन के परिणामस्वरूप पिछले वर्ष के साथ-साथ वर्तमान वर्ष के लिए चयनित उम्मीदवारों के बीच एक अंतर्निहित भेदभाव हुआ है। उच्च न्यायालय के फैसले ने आवश्यक रूप से राम भगत सिंह के मामले (सुप्रा) में उच्च न्यायालय के फैसले की अनदेखी की, क्योंकि यह न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति के लिए आरक्षित श्रेणी के मामले में छूट प्रदान नहीं करता है; (e यह संविधान के अनुच्छेद 16 का उल्लंघन करता है; और

(e) अंत में संख्यात्मक उदाहरण के रूप में यह तर्क दिया जाता है कि आरक्षित श्रेणी से संबंधित उम्मीदवार को साक्षात्कार में अप्राप्य उच्च अंक (यानी 120 में से 105) प्राप्त करने होंगे, इस तथ्य के बावजूद कि उसने 45% के निर्धारित योग्यता अंकों के साथ लिखित परीक्षा उत्तीर्ण की थी। इस प्रकार, उच्च न्यायालय के पत्र के प्रवर्तन के परिणामस्वरूप विसंगतिपूर्ण या अव्यावहारिक स्थिति पैदा होती है और लागू नियमों के उद्देश्य को पराजित करती है।

राज्य और आयोग का रुख याचिकाकर्ता के मामले का पूरी तरह से समर्थन करता है और उस ओर से संबोधित तर्कों को केवल याचिकाकर्ताओं के कारण को आगे बढ़ाने के लिए देखा जा सकता है।

(21) दूसरी ओर, उच्च न्यायालय का रुख इस अनुरोध के साथ स्पष्ट और निश्चित है कि रिट याचिका खारिज किए जाने के योग्य है। उच्च न्यायालय का रुख यह है कि न्यायिक सेवाओं की नियुक्ति और प्रदर्शन में उच्च मानक बनाए रखना संविधान के अनुच्छेद 234 और

235 के तहत उच्च न्यायालय का प्रचुर कर्तव्य है। राज्य निर्णय से बाध्य है और यहां तक कि ऐसे अधिकार का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा जारी किया गया सुझाव भी राज्य के लिए बाध्यकारी है। यह आगे तर्क दिया जाता है

उच्च न्यायालय की ओर से कहा गया है कि उच्च न्यायालय के दिनांक 20 जुलाई, 2000 के निर्णय के लिए नियमों में संशोधन की आवश्यकता नहीं है क्योंकि न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति में उच्च मानक निर्धारित करने के लिए यह मुख्य रूप से प्रशासनिक प्रकृति का निर्णय है। नियमों के भाग सी भाग डी के तहत प्रासंगिक नियमों के प्रावधानों को सद्भाव में पढ़ा जाना चाहिए क्योंकि वे विभिन्न और विशिष्ट क्षेत्रों में काम करते हैं। नियमों के भाग डी के तहत नियुक्ति करते समय, उच्च न्यायालय मानक या कट ऑफ प्रदान करने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र में है, जिसके बाद वह प्रतिवादी-राज्य को नियुक्ति करने की अनुमति नहीं देगा।

(22)उच्च न्यायालय के विद्वान वकील ने अपनी प्रस्तुतियों के समर्थन में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर भरोसा किया।.

(23)उच्च न्यायालय की ओर से दायर लिखित बयान में, वर्तमान रिट याचिकाओं को जन्म देने वाले तथ्यों पर ज्यादा विवाद नहीं है। इसमें उठाए गए विवाद वर्तमान मामले में शामिल कानूनी मुद्दों की व्याख्या और अर्थ से संबंधित हैं।.

(24)सुभाष चंद्र मारवाह मामले पर भरोसा करते हुए, यह तर्क दिया जाता है कि याचिकाकर्ता न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति के लिए अपने पक्ष में परमादेश की मांग नहीं कर सकते हैं, क्योंकि उन्होंने कुल मिलाकर 50% से कम अंक प्राप्त किए हैं जो अनुचित है। उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायालय का निर्णय न्यायाधीशों की समिति की सिफारिशों पर आधारित था, जिसे पंजाब के संबंध में 15 अगस्त, 1998 की बैठक में अनुमोदित किया गया था और इसी तरह का प्रशासनिक निर्णय 19 अप्रैल, 2000 को उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया था, जिसे अंततः 5 मई को राज्य प्रशासन और आयोग को सूचित किया गया था। 20 जुलाई, 2000 को जारी किए गए पत्र के माध्यम से, जिसे याचिकाकर्ता द्वारा रिट याचिका में संलग्न किया गया है और इसे लागू किया गया है।

(25)उच्च न्यायालय द्वारा यह कहा गया है कि एक बार 1999 बैच के पिछड़ा वर्ग श्रेणी से संबंधित बसरुद्दीन नामक व्यक्तियों को पहले ही पोस्टिंग दी जा चुकी है क्योंकि उन्होंने उच्च न्यायालय के निर्णय के अनुरूप 50% से अधिक कुल अंक प्राप्त किए थे, उक्त उम्मीदवार को सामान्य श्रेणी के तहत नियुक्त किया गया था, हालांकि वह पिछड़ा वर्ग श्रेणी से था। इन परिसरों पर हाईकोर्ट की ओर से प्रार्थना की जाती है कि रिट याचिका खारिज की जाए।

(26)इससे पहले कि हम अपने समक्ष उठाए गए तर्कों के गुण-दोष या अन्यथा पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ें, हमें यह ध्यान देना चाहिए कि लिखित वक्तव्य में उल्लिखित तथ्यों को आगे बढ़ाते हुए राज्य की ओर से यह कहा गया था कि 20 जुलाई, 2000 के पत्र के माध्यम से उच्च न्यायालय के सुझाव को राज्य प्रशासन द्वारा स्वीकार कर लिया गया है और संबंधित नियमों को अधिसूचना संख्या जीएसआर 6/कॉन्स्टेंट/आर्ट्स 234 द्वारा संशोधित किया गया है। और दिनांक 17 अप्रैल, 2003 की अधिसूचना सं 309/2003, जो संभावित है।

(27) तीन आकस्मिक प्राधिकरणों के बीच प्रभावी परामर्श वैध विधान का सार होने के कारण, हमारे लिए यह कहना कठिन है कि उच्च न्यायालय के दिनांक 5 मई, 2000 या 20 जुलाई, 2000 के पत्र में याचिकाकर्ताओं द्वारा दिए गए तर्क के अनुसार नियमों में संशोधन करने का विधायी प्रभाव था। यह उच्च न्यायालय द्वारा राज्यपाल को दिया गया एक सुझाव था जो राज्य की न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति के लिए सक्षम प्राधिकारी है। सरकार और उच्च न्यायालय के बीच पत्राचार के आदान-प्रदान के बाद, उच्च न्यायालय ने अपने सुझावों को प्रभावी बनाने के लिए नियमों में पहले ही संशोधन किया है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय के आक्षेपित पत्र में न तो अधिकार क्षेत्र का अभाव है और न ही क्षमता। वास्तव में सरकार को पत्र की विषय-वस्तु पर अधिक तत्परता के साथ कार्रवाई करनी चाहिए थी। जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम एआर ज़क्की के मामले में, (5) एक मामला जो राज्य की न्यायिक सेवाओं की नियुक्ति से संबंधित था, ने न्यायिक सेवा पर लागू नियमों को तैयार करने में विभिन्न घटकों की "परामर्श" भागीदारी की अभिव्यक्ति की व्याख्या की, जबकि निम्नानुसार अवलोकन किया:-

"हालांकि आम तौर पर नियमों में किसी भी संशोधन के लिए उच्च न्यायालय द्वारा की गई सिफारिशों को राज्य सरकार द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए, लेकिन, यदि किसी विशेष मामले में, राज्य सरकार, अच्छे और वजनदार कारण से, उच्च न्यायालय की सिफारिशों को स्वीकार करने में मुश्किल पाती है और राज्य सरकार उच्च न्यायालय को अपने दृष्टिकोण से अवगत कराती है, उच्च न्यायालय को निस्संदेह इस मामले

पर पुनर्विचार करना चाहिए। उच्च न्यायालय के साथ-साथ राज्य सरकार को भी ऐसे नियम बनाने के सही उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए इस प्रश्न को अलग तरीके से देखना चाहिए जो न्याय के उचित और कुशल प्रशासन के लिए राज्य की न्यायिक सेवा में उचित व्यक्तियों की नियुक्ति सुनिश्चित करेगा।

(5) 1992 (1) एस.सी.टी.

यदि इस प्रकार मामले से संपर्क किया जाता है, तो कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि उच्च न्यायालय की सिफारिशों पर विचार करते समय राज्य सरकार इस आधार पर आगे बढ़ेगी कि ऐसे मामलों में उच्च न्यायालयों की राय सर्वोच्च सम्मान की हकदार है।

"हम आशा और विश्वास करते हैं कि इस तरह के विचार के बाद उच्च न्यायालय द्वारा की गई सिफारिशों को राज्य सरकार से उचित महत्व और सम्मान मिलेगा और एक समाधान तैयार किया जाएगा जो कर्मचारियों की आकांक्षाओं को पूरा करेगा और सरकार को भी स्वीकार्य होगा।

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम श्री पी डी अत्री और अन्य के मामले में भी इसी तरह का विचार व्यक्त किया गया था।

(28) नियमों के भाग सी के नियम 4, 7, 8 और 10 प्रासंगिक नियम हैं जो परीक्षा के आयोजन, उम्मीदवारों के चयन और हरियाणा लोक सेवा आयोग द्वारा मेरिट सूची तैयार करने को नियंत्रित करते हैं। नियम 7 के अनुसार, किसी भी उम्मीदवार को किसी भी पेपर में किसी भी अंक के साथ जमा नहीं किया जाएगा जब तक कि वह आईटीबी में 33% अंक प्राप्त नहीं करता है, नियम 7 (2) के संदर्भ में, किसी भी उम्मीदवार को वाइवा वोका टेस्ट के लिए नहीं बुलाया जाएगा जब तक कि वह सभी लिखित पत्रों के कुल में 50% योग्यता अंक और भाषा पेपर में 33% अंक प्राप्त नहीं करता है। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के मामले में इस नियम के परंतुक के तहत छूट प्रदान की गई है। वे कुल मिलाकर 45% अंक प्राप्त कर सकते हैं। नियम 8 के तहत योग्य उम्मीदवारों की योग्यता हरियाणा लोक सेवा आयोग द्वारा लिखित पत्रों और मौखिक परीक्षा में प्राप्त कुल अंकों के अनुसार निर्धारित की जाएगी। परिणाम प्रकाशित किया जाना है और परीक्षा के बाद एक उम्मीदवार को

चिकित्सा फिटनेस प्राप्त करनी होगी और उसके पूर्ववृत्त के सत्यापन के बाद सरकार को उच्च न्यायालय को सूची भेजनी होगी। इस पूरी प्रक्रिया को नियमों के भाग ग के अंतर्गत निपटाया जाता है। भाग डी एक अलग अध्याय से संबंधित है अर्थात नियुक्तियां, इस भाग के नियम 1 के अनुसार, नियम 10 और 11 के तहत अधीनस्थ न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए सरकार द्वारा चयनित उम्मीदवारों के नाम। उनके चयन के रजिस्टर पर दर्ज किया जाएगा। हालांकि, इन नामों को भाग डी के नियम 4 के संदर्भ में हटाया जा सकता है।

---

(6) J.T. 1999(1) S.C. 441

नियम 5 के तहत, उम्मीदवार को विभागीय परीक्षा उत्तीर्ण करनी होगी और प्रशिक्षण की अवधि पूरी करनी होगी और फिर नियम 7 के तहत परिवीक्षा पर होना होगा, जिसे राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय की सिफारिश पर कोई कारण बताए बिना सेवा से हटाया जा सकता है। इस भाग के नियम 8 में दिनांक 5 फरवरी, 1993 के संशोधन द्वारा संशोधन किया गया था। परीक्षा के परिणामस्वरूप उम्मीदवारों के चयन की तारीख से एक वर्ष के भीतर होने वाली अप्रत्याशित रिक्तियों को भरने के लिए आरक्षण नीति को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय रजिस्टर पर दिए गए नामों की संख्या को प्रतिबंधित करना हरियाणा लोक सेवा आयोग द्वारा विज्ञापित रिक्तियों के साथ-साथ पांच अतिरिक्त नामों से अधिक नहीं होगा।

> (29) हम मुख्य रूप से चिंतित हैं कि क्या नियमों के भाग ग के नियम 7 और 8 के तहत विनिदष्ट पात्रता शर्तों और प्रतिबंधों के अलावा, विधिवत चयनित उम्मीदवार को उच्च न्यायालय के दिनांक 5 मई, 2000 या 20 जुलाई, 2000 के पत्र के आधार पर उनकी नियुक्ति से वंचित किया जा सकता है। उच्च न्यायालय की ओर से पेश हुए विद्वान वकील ने जोरदार तर्क दिया कि उच्च न्यायालय का पत्र किसी भी मानदंड को बदलने या यहां तक कि नियमों के तहत प्रदान की गई शर्तों के सार को बदलने के निहित प्रभाव के रूप में नहीं है। यह तर्क दिया जाता है कि नियुक्ति नियमों के भाग डी के तहत नियंत्रित एक पहलू है और उच्च न्यायालय ने संबंधित नियमों के प्रतिबंधों के भीतर सेवा में आवश्यक उत्कृष्टता बनाए रखने के लिए उच्च योग्यता वाले व्यक्तियों की नियुक्ति के लिए केवल एक उच्च अंक प्रदान किया है। यह भी तर्क दिया गया था कि भाग डी का नियम 7 इस तरह के किसी भी कट ऑफ के संबंध में चुप है और इस तरह के प्रतिबंध प्रदान करना नियमों का उल्लंघन नहीं करता है। अपनी

दलील के समर्थन में, विद्वान वकील ने संत लाल और अन्य बनाम हरियाणा राज्य और अन्य के मामलों में दिए गए फैसलों पर भरोसा किया, (7) हरियाणा राज्य बनाम सुभाष चंद्र मारवाह और अन्य, (सुप्रा) और नीलिमा शांगला (मिस) बनाम हरियाणा राज्य और अन्य |

(30) चंद्र मारवाह (सुप्रा) के मामले में शीर्ष अदालत द्वारा निर्धारित सिद्धांत यह है कि जहां कई योग्य उम्मीदवारों में से चयन द्वारा नियुक्तियां की जाती हैं, वहां सरकार के लिए क्षमता के उच्च मानकों को बनाए रखना और एक स्कोर तय करना खुला है जो केवल वांछनीयता के लिए आवश्यक स्कोर से बहुत अधिक है। उनके लॉर्डशिप ने यह भी माना कि जिन उम्मीदवारों ने परीक्षा में 45% अंक प्राप्त किए थे और सरकार ने उच्च मानक बनाए रखने के लिए अंकों को 55% तक बढ़ा दिया था, वे 55% से कम अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों के किसी भी अधिकार का उल्लंघन नहीं करते हैं। नीलिमा शांगला (सुप्रा) के मामले में अदालत ने कहा कि आयोग के पास लिखित परीक्षा और मौखिक परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले उम्मीदवारों में से आगे चयन करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है।

(31) जहां तक नीलिमा शांगला के मामले (सुप्रा) का सवाल है, यह उत्तरदाताओं के लिए शायद ही कोई मदद है। उच्च मानक का निर्धारण सक्षम प्राधिकारी द्वारा उपयुक्त घटकों के परामर्श के बाद किया गया था। तथापि, वर्तमान मामले में सरकार ने विशेष रूप से या यहां तक कि निहित रूप से अपनी सहमति नहीं दी ताकि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि ऐसे उच्च मानक अंक निर्धारित करने में उच्च न्यायालय और सरकार के बीच सहमति थी। तथ्यों के आधार पर भी, हमारे लिए यह कहना मुश्किल हो सकता है कि रिक्त विज्ञापित की तुलना में अधिक योग्य उम्मीदवार थे। यह रिकॉर्ड में आया है कि वर्ष 1999 में विज्ञापित रिक्तियां 46 थीं और 23 रिक्तियों को छोड़कर विभिन्न श्रेणियों के तहत 23 उम्मीदवारों को नियुक्त किया गया था, जबकि वर्ष 2000 में विज्ञापित रिक्तियां 12 थीं और 3 रिक्तियों को छोड़कर केवल 9 उम्मीदवारों को नियुक्त किया गया था।

(32) ऐसे उच्च मानकों के निर्धारण का सार सामान्यत नियमों में बनाए गए नुस्खे और मानकों द्वारा किया जाएगा। उच्च मानक को बाद के चरण में भी लागू किया जा सकता है बशर्ते सक्षम प्राधिकारी सेवा प्रशासन के हित में एक सचेत निर्णय ले। सरकार ने अपने दिनांक 20 जून, 2000 के पत्र के माध्यम से उच्च न्यायालय के विचारार्थ भेदभाव सहित कतिपय आपत्तियां उठाते हुए एक सचेत निर्णय लिया। तथापि, उच्च न्यायालय ने दिनांक 15 दिसम्बर, 2000 के अपने पत्र के माध्यम से अपना रुख दोहराया। उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्ति के लिए उच्च योग्यता निर्धारित करने का निर्णय लेने से पहले ही चयन किया जा चुका था और सूची उच्च न्यायालय को भेज दी गई थी। बाद में नोटिस जारी करके सरकार ने क्या किया है? यह सभी संबंधित ोंं के हित में होता कि ऐसी अधिसूचना बहुत पहले जारी की गई हो और नियमों में संशोधन करके उच्च न्यायालय द्वारा लागू की गई हो। याचिकाकर्ता यह दलील नहीं दे सकते कि उनके पास कोई निहित अधिकार है क्योंकि उन्होंने अस्तित्व में मौजूद नियमों के संदर्भ में लिखित परीक्षा और मौखिक परीक्षा पास कर ली है।

(33)उपरोक्त निर्णयों में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि नियमों के तहत प्रदान किए गए पात्रता मानदंड से अधिक अंक हमेशा सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रदान किए जा सकते हैं। शॉर्ट-लिस्टिंग सेवा न्यायशास्त्र में अच्छी तरह से स्वीकार किए जाने वाले अन्य मानदंडों में से एक है। **अशोक कुमार यादव बनाम हरियाणा राज्य** के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से लोक सेवा की ओर से इस तरह की कार्रवाई को मंजूरी दी। न्यायालय ने निम्नानुसार कहा :—

> पीठ ने कहा, "हम फैसले के पहले हिस्से में पहले ही विनियम 3 का उल्लेख कर चुके हैं और हमें इसे फिर से पेश करने की जरूरत नहीं है। विनियम 3 के एक साधारण प्राकृतिक निर्माण पर यह स्पष्ट है कि यह जो निर्धारित करता है वह मौखिक परीक्षा में उपस्थित होने की पात्रता के लिए केवल एक न्यूनतम योग्यता है। मौखिक परीक्षा में उपस्थित होने के लिए पात्र होने के लिए प्रत्येक उम्मीदवार को लिखित परीक्षा में कुल मिलाकर कम से कम 45 प्रतिशत अंक प्राप्त करने होंगे। लेकिन न्यूनतम 45 प्रतिशत अंक प्राप्त करना अपने आप में एक उम्मीदवार को इस बात पर जोर देने का अधिकार नहीं देता है कि उसे मौखिक परीक्षा के लिए बुलाया जाना चाहिए। हरियाणा लोक सेवा आयोग पर न्यूनतम पात्रता आवश्यकता को पूरा करने वाले सभी उम्मीदवारों के लिए मौखिक परीक्षा बुलाने की कोई बाध्यता नहीं है । हरियाणा लोक सेवा आयोग यह कह सकता है कि लिखित परीक्षा में न्यूनतम 45 प्रतिशत अंकों के पात्रता मानदंड में से केवल सीमित संख्या में उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए बुलाया जाएगा।
>
> उन्होंने कहा, 'इसलिए संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) में हमेशा से उपलब्ध रिक्तियों की संख्या से दोगुने या तीन गुना से अधिक का प्रतिनिधित्व करने वाले उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए बुलाने की परंपरा रही है. सिविल सेवा परीक्षा के लिए भर्ती नीति और चयन विधियों पर कोठारी समिति की रिपोर्ट भी प्रश्न की गहन जांच के बाद बताती है कि साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने वाले उम्मीदवारों की संख्या क्या होनी चाहिए।

"लिखित पत्रों में कुल अंकों के क्रम में साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने वाले उम्मीदवारों की संख्या, हमें लगता है, भरी जाने वाली रिक्तियों की संख्या से दोगुनी से अधिक नहीं होनी चाहिए।. . . .

अन्यथा लिखित परीक्षा, जो निश्चित रूप से मौखिक परीक्षा की तुलना में अपने मूल्यांकन में अधिक वस्तुनिष्ठ है, सभी अर्थ और विश्वसनीयता खो देगी और मौखिक परीक्षा जो कुछ हद तक व्यक्तिपरक और विवेकाधीन है, चयन की प्रक्रिया में निर्णायक कारक बन जाएगी।"

(34)साक्षात्कार के प्रयोजनों के लिए योग्य उम्मीदवारों के लिए शॉर्ट-लिस्टिंग के प्रस्ताव और भरी जाने वाली रिक्तियों के प्रत्यक्ष अनुपात में नियुक्ति को भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सेवाओं में नियुक्ति के लिए एक सही तरीका माना गया था। इस संबंध में मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग बनाम नवनीत कुमार पोतदार और अन्य, (10) और भारत संघ और एक अन्य बनाम टी. सुंदररमन और अन्य, (11) के मामलों में दिए गए फैसलों का संदर्भ दिया जा सकता है।

(35)उपरोक्त निर्णय के विश्लेषण का संचयी प्रभाव स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि तथ्य यह है कि एक उम्मीदवार ने सभी मामलों में पात्रता की शर्त को पूरा करके लिखित या मौखिक परीक्षा में अर्हता प्राप्त की है, उसे पद पर नियुक्ति के लिए कानून में कोई अपरिहार्य अधिकार प्रदान नहीं करता है। डा के कामुलू और अन्य बनाम डा एस सूर्यप्रकाश राव और अन्य के मामले में, (12) माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि जो उम्मीदवार अर्हता प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए निरस्त नियमों के अनुसार पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का कोई निहित अधिकार प्राप्त नहीं है कि सरकार ने ऐसी रिक्तियों को न भरने का नीतिगत निर्णय लिया था। दूसरे शब्दों में, पात्रता मानदंड ों की संतुष्टि या प्रतियोगी परीक्षा उत्तीर्ण करना केवल एक उम्मीदवार को नियुक्ति के लिए विचार के लिए उत्तरदायी बनाता है यदि सक्षम प्राधिकारी ऐसा निर्णय लेता है और उसे कोई अपरिहार्य अधिकार प्रदान नहीं करता है। हालांकि, नियुक्ति के लिए उम्मीदवार की आशा को सुरक्षित रूप से वैध प्रत्याशा कहा जा सकता है। वैध प्रत्याशा और कानूनी अधिकार के बीच अंतर की एक स्पष्ट रेखा है। कानूनी अधिकार कानून में लागू करने योग्य है जबकि कानूनी रूप से एक प्रत्याशा केवल विचार का विषय है, जो विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है जिन्हें राज्य सरकार नीति के मामले के रूप में या अन्यथा तय कर सकती है।

(36)उपर्युक्त नियमों और निर्णयों में अंतवष्ट उपबंधों की विश्लेषणात्मक जांच करने से हमारे मन में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि संबंधित पक्षों के लिए उच्च न्यायालय के दिनांक 5 मई, 2000 या 20 जुलाई, 2000 के पत्र में निहित खंड को लागू करने से पहले नियमों में संशोधन करना अनिवार्य नहीं था। यह केवल उच्च योग्यता की याचिका की नियुक्ति के प्रयोजनों के लिए एक पैरामीटर था। कानून इस संबंध में सुसंगत है कि सेवा में उच्च मानकों के रखरखाव के प्रयोजनों के लिए और प्रशासनिक उत्कृष्टता के हित में लिए गए अपने नीतिगत निर्णय को आगे बढ़ाने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा पात्रता शर्तों से अधिक अंक हमेशा पेश किए जा सकते हैं। हम पहले ही कह चुके हैं कि उच्च न्यायालय के पत्र में किसी अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र या क्षमता का अभाव नहीं है। यह दुर्बलता उच्च न्यायालय के सुझाव को स्वीकार न करने और नीति के रूप में इसे कार्यान्वित करने में सरकार की निष्क्रियता के परिणामस्वरूप हुई है। वास्तव में वे उक्त पत्र की विषय-वस्तु के कार्यान्वयन पर विशिष्ट आपत्तियां उठाते हैं और राज्य द्वारा नियमों में संशोधन किए जाने से पहले दिन में बहुत देर हो चुकी थी। सर्वसम्मति की कमी वह कारण है जो कानून को याचिकाकर्ताओं के पक्ष में झुकाता है और प्रासंगिक नियमों में विधायी संशोधनों की कमी नहीं है।

(37)याचिकाकर्ताओं की ओर से उठाया गया एक अन्य तर्क यह है कि किसी भी प्राधिकरण के लिए परीक्षा आयोजित होने के बाद योग्यता अंकों में मॉडरेशन को प्रभावित करना सक्षम नहीं है। उमेश चंद्र शुक्ला बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में, (13) माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली न्यायिक सेवाओं में नियुक्तियों से निपटते समय, जहां दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दिल्ली न्यायिक सेवाओं में उम्मीदवारों की भर्ती के उद्देश्य से प्रतियोगी परीक्षा आयोजित की गई थी और नियुक्तियों के लिए सूची को बढ़ाने के लिए अंकों का मॉडरेशन किया गया था, उचित नहीं माना गया था। उनके लॉर्डशिप निम्नानुसार आयोजित किए गए थे।—

> "नियमों के आर. 16 को पढ़ने पर, जिसमें केवल यह निर्धारित किया गया है कि लिखित परीक्षा के बाद उच्च न्यायालय मेरिट के क्रम में नामों की व्यवस्था करेगा और इन नामों को चयन समिति को भेजा जाएगा, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय के पास उन उम्मीदवारों के नामों को शामिल करने की कोई शक्ति नहीं है, जिन्होंने शुरू में मॉडरेशन का सहारा लेकर

न्यूनतम योग्यता अंक प्राप्त नहीं किए थे। खासकर जब कोई शिकायत नहीं थी।

---

1. 1351

या तो प्रश्न पत्रों के बारे में या मूल्यांकन के तरीके के बारे में। मॉडरेशन की ऐसी शक्ति के प्रयोग से सार्वजनिक नियुक्तियों के चयन की प्रक्रिया में अविश्वास की भावना पैदा होने की संभावना है जिसका उद्देश्य निष्पक्ष और निष्पक्ष होना है। इसके परिणामस्वरूप समानता के सिद्धांत का उल्लंघन भी हो सकता है और मनमानी हो सकती है। उच्च न्यायालय द्वारा इंगित किए गए मामले निस्संदेह कठिन मामले हैं, लेकिन कठिन मामलों को खराब कानून बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इन परिस्थितियों में, हम नियमों के सख्त निर्माण के पक्ष में हैं और मानते हैं कि उच्च न्यायालय के पास नियमों के तहत ऐसी कोई शक्ति नहीं है। हमारी राय है कि मॉडरेशन मार्क्स जोड़ने के बाद उच्च न्यायालय द्वारा तैयार की गई सूची रद्द की जा सकती है। याचिकाकर्ताओं की ओर से पहली दलील दी गई है। इसलिए, इसे बरकरार रखा जाना चाहिए। हालांकि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि इस मामले में उच्च न्यायालय द्वारा अपनी पिछली प्रथा के बाद की गई त्रुटि एक प्रामाणिक है और किसी भी गलत विचार से प्रेरित नहीं है।

(38) उड़ीसा न्यायिक सेवा नियम, 1964 के नियम 16, 17 और 18 से निपटते हुए दुर्गाचरण मिश्रा बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य (14) नामक एक अन्य मामले में भी, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रथा को स्वीकार नहीं किया कि लोक सेवा आयोग उम्मीदवारों की उपयुक्तता निर्धारित करने के लिए मौखिक परीक्षा में प्राप्त किए जाने वाले न्यूनतम मानक या अंक निर्धारित कर सकता है और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा दी गई सलाह दी जा सकती है। जो वैधानिक नियमों के विपरीत था, उचित नहीं था। यह निम्नानुसार आयोजित किया गया था:—

नियम बनाने वाले अधिकारियों ने न्यायिक पदों पर नियुक्ति के लिए उम्मीदवारों के चयन के लिए एक योजना प्रदान की है। नियम 16 लिखित परीक्षा में उम्मीदवारों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले न्यूनतम योग्यता अंकों को निर्धारित करता है। यह सभी पेपरों में कुल अंकों का 30% है। जिन उम्मीदवारों ने उस मिम्म से अधिक अंक प्राप्त किए हैं, उन्हें अकेले मौखिक परीक्षा के लिए बुलाया जाएगा। नियमों में मौखिक परीक्षा में प्राप्त किए जाने वाले ऐसे किसी न्यूनतम अंक को निर्धारित नहीं किया

गया है। मौखिक परीक्षा के बाद, आयोग मौखिक परीक्षा के अंक जोड़ेगा।

---

1. 1987 (5) एसएलआर 276

लिखित परीक्षा में प्राप्त अंकों के लिए। तब नियम 18 कहता है।

इसके बाद आयोग द्वारा मेरिट के क्रम में उम्मीदवारों के नामों की व्यवस्था की जाएगी।

यह नियम 18 का अधिदेश है। आयोग दो अंकों को एक साथ जोड़देगा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि मौखिक परीक्षा में ये अंक क्या हैं। दोनों टेस्ट में एग्रीगेट मार्क्स के आधार पर उम्मीदवारों के नाम मेरिट के क्रम में व्यवस्थित करने होंगे। इस प्रकार तैयार की गई सूची सरकार को भेजी जाएगी। आयोग के पास किसी भी उम्मीदवार का नाम चयन सूची से केवल इसलिए बाहर करने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि उसने मौखिक परीक्षा में कम अंक प्राप्त किए हैं।

राम भगत सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया गया था। यहां तक कि प्रकाश चंद्र अग्रवाल बनाम बिहार राज्य और अन्य (15) के मामले में जहां आयोग ने उच्च न्यायालय के परामर्श से चयन सूची में उम्मीदवारों के नाम शामिल करने के लिए कट ऑफ अंक 38% तय किए थे, बाद में आयोग ने 38.8 अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवार का नाम शामिल करने से इनकार कर दिया। इस आधार पर कि उच्च न्यायालय ने पहले कट ऑफ प्रतिशत अंकों के रूप में 40% की सिफारिश की थी, इसे भी आयोग की ओर से अनुचित कार्य माना गया था। इस प्रकार, उस मामले में उच्च न्यायालय के निर्णय को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा केवल इस आधार पर रद्द कर दिया गया था, जो नियमों के अनुसार विधिवत चयनित उम्मीदवारों की नियुक्ति के लिए स्पष्ट बाधा थी। उच्च न्यायालय की ओर से यह दलील कि पत्र केवल एक उच्च मानक प्रदान करता है, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित नहीं ठहराया जा सकता है। उपर्युक्त मामलों में न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत से पता चलता है कि उक्त उच्च कट ऑफ केवल तभी कायम रह सकती है जब यह सर्वसम्मत दृष्टिकोण का परिणाम हो और नियमों के भाग 'ग' के नियमों के प्रावधानों के साथ विरोधाभासी न हो। भाग 'डी' के प्रावधान एक अलग क्षेत्र में काम करते हैं और चयन के बजाय सेवा की शर्तों को प्रदान करने और कवर करने का इरादा रखते हैं। तैनाती आदेश, प्रशिक्षण, इसकी अवधि, परिवीक्षा

के दौरान सेवा, विशेष रूप से उच्च न्यायालय के नियंत्रण और पर्यवेक्षण के तहत आने वाले मामले हैं और राज्य सरकार इसके लिए बाध्य है।

इस संबंध में उच्च न्यायालय की राय। लेकिन भाग 'डी' के तहत प्रावधान और शक्तियां भाग 'डी' के नियम 4 के संदर्भ में उच्च न्यायालय के रजिस्टर से पैनल से हटाए गए उम्मीदवारों की सीमा तक प्रभावित कर सकती हैं।

(39)याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि भले ही दलीलों के लिए यह मान लिया जाए कि उच्च न्यायालय द्वारा जारी 5 मई, 2000/20 जुलाई, 2000 का पत्र अन्यथा कानून में स्वीकार्य है, तो इसे भावी प्रभाव से प्रभावी होना चाहिए और वर्ष 1999 और 2000 में किए गए चयनों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकता है। हमारे सामने यह विवादित नहीं है कि इन बैचों के लिए परीक्षाएं संबंधित वर्षों में आयोजित की गई थीं; इससे पहले मौखिक परीक्षा भी आयोजित की गई थी; चयन सूचियां आयोग द्वारा सरकार को भेजी गई थीं और बदले में सरकार द्वारा उच्च न्यायालय को उनके नाम उच्च न्यायालय के रजिस्टर में सूचीबद्ध करने के लिए भेजे गए थे। यह सारी प्रक्रिया उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को जारी करने और पुन पुष्टि किए जाने से पहले की गई थी, जो पहले मई, 2000 में और फिर दिसंबर, 2000 में था। दूसरे शब्दों में, चयन की पूरी प्रक्रिया उच्च न्यायालय के आक्षेपित पत्र के जारी होने से पहले समाप्त हो गई थी। सभी प्रासंगिक समय पर, मौजूदा नियमों को कभी नहीं बदला गया था। एक प्रभाग।

जतिंदर कुमार बनाम हरियाणा राज्य और एक अन्य (16) के मामले में इस न्यायालय की पीठ ने कहा कि जिन उम्मीदवारों ने उच्च सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) में विज्ञापन की अंतिम तिथि तक आवेदन किया था, उन्हें उस तारीख को मौजूद पात्रता शर्तों के संदर्भ में चयन और नियुक्ति के लिए विचार करने का अधिकार है। यदि यह भी कहा जाता है कि केवल इसलिए कि नियमों में 24 अगस्त, 1993 से संशोधन किया गया है, 1 मई, 1993 का विज्ञापन भावी प्रभाव से प्रभावी होगा। न्यायालय की खंडपीठ ने उक्त विचार व्यक्त करते हुए निम्नानुसार निर्णय लिया। -

"ऊपर उद्धृत संशोधन पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि आयु के बारे में नियम को पूर्वव्यापी प्रभाव से संशोधित नहीं किया गया है और बार में तीन साल के अभ्यास की आवश्यकता के साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्रतिनिधि के संघ की आवश्यकता वाले नियम को 24 अगस्त, 1993 से संशोधित किया गया है। इस संशोधन अधिसूचना से यह भी पता चलता है कि नियम बनाने वाले प्राधिकारी ने नियमों में कोई संशोधन करना उचित नहीं समझा है ताकि यह 24 अगस्त, 1993 से पहले की तारीख से प्रभावी हो।

अब जिस मुद्दे को निर्धारित करने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या ये संशोधन 24 अगस्त, 1993 से पहले हुई रिक्तियों के संबंध में और किसी भी मामले में उन रिक्तियों के संबंध में लागू किए जा सकते थे जिन्हें आयोग द्वारा 1 मई, 1993 को पहले ही विज्ञापित किया जा चुका था और जब आवेदन पत्र प्राप्त करने की अंतिम तिथि 31 मई को समाप्त हो गई थी। 1993. संपूर्ण स्रोत-सामग्री जिसमें से आयोग द्वारा चयन किया जाना अपेक्षित था, 31 मई, 1993 तक उसे उपलब्ध हो गई थी। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि पंजाब लोक सेवा आयोग ने पंजाब सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) में भर्ती के लिए चयन की प्रक्रिया शुरू की थी और वास्तव में उस विज्ञापन के आधार पर चयन की प्रक्रिया जारी रखी थी। यह बताया गया है कि इस तरह के चयन के आधार पर नियुक्तियां भी की गई हैं।

संशोधन से पहले उपलब्ध रिक्तियों के लिए नियमों में किए गए संशोधन की प्रयोज्यता से संबंधित प्रश्न पर सुप्रीम कोर्ट द्वारा वाईवी रंगैया बनाम जे श्रीनिवास राव (सुप्रा) में विचार किया गया था। यह एक ऐसा मामला था जिसमें नियमों में किए गए संशोधन से पहले उप-रजिस्ट्रार ग्रेड-II के पद पर पदोन्नति के लिए कुछ रिक्तियां उपलब्ध हो गई थीं और कुछ संशोधन के बाद उपलब्ध हो गई थीं। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि संशोधित नियम उन रिक्तियों पर लागू नहीं किए जा सकते हैं जो संशोधन से पहले उपलब्ध हो गए थे।

कुछ इसी तरह का दृष्टिकोण माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा हरियाणा राज्य और अन्य बनाम शमशेर जंग बहादुर और अन्य के मामले में भी लिया गया था।

(40) इस स्तर पर आक्षेपित पत्र की सामग्री पर वापस लौटना उचित होगा। उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण ने स्पष्ट रूप से पत्र में उल्लिखित शर्तों के कार्यान्वयन के परंतुक को दर्शाया। शर्तों ने स्पष्ट रूप से निर्णय लेने की गुंजाइश छोड़ दी।

(17) 19.72 एस.एल.आर. 441

अधिकारियों द्वारा और इस मामले में सुझाव को लागू नहीं किया गया, "मानक को कम करने के लिए बहुत ही बाध्यकारी कारण थे। इस पत्र में इस

अभिव्यक्ति का उपयोग पर्याप्त रूप से इंगित करता है कि अंतिम निर्णय सरकार पर छोड़ दिया गया था और प्रमुख शर्तों का सख्ती से प्रवर्तन या पालन बिल्कुल अनिवार्य नहीं था। इसके जवाब में सरकार ने यह रुख अपनाया है कि चूंकि कोई अन्य उम्मीदवार उपलब्ध नहीं था और रिक्तियां थीं, इसलिए सरकार ने चयनित उम्मीदवारों को नियुक्ति देने का निर्णय लिया था। उच्च न्यायालय के पत्र में निर्धारित शर्तों को लागू करने के परिणामों के बारे में संदेह भी सरकार द्वारा स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया गया था, जिसमें यह भी शामिल था कि इसके परिणामस्वरूप भेदभाव हो सकता है और नियमों का उल्लंघन होगा। हम सरकार के रुख में कोई दोष नहीं ढूंढ पा रहे हैं क्योंकि उच्च न्यायालय ने भी 1999 की सीडब्ल्यूपी संख्या 13486, अमरीश कुमार जैन बनाम पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय और एक अन्य रिट याचिका में यही रुख अपनाया था। यह पंजाब राज्य का मामला है)। उच्च न्यायालय की ओर से दायर जवाबी हलफनामे के प्रासंगिक पैराग्राफ को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:—

> पीठ ने कहा, 'जहां तक सुरिंदर सिंह, राजीव कालरा, नवजोत कौर और सुरिंदर कुमार नाम के चार . उम्मीदवारों की नियुक्ति का सवाल है तो रिट याचिका के पैरा 12 में कहा गया है कि इन उम्मीदवारों ने फरवरी 1995 में हुई पीसीएस (जेबी) परीक्षा में 50 प्रतिशत से कम अंक हासिल किए थे. उस सत्र के दौरान, बहुत कम उम्मीदवारों ने 50% अंक प्राप्त करके लिखित परीक्षा उत्तीर्ण की थी और रिक्तियां उपलब्ध योग्य व्यक्तियों की तुलना में बहुत अधिक थीं और यह रिक्तियों को भरने की सख्त आवश्यकता की परिस्थितियों में था क्योंकि न्यायिक कार्य पीड़ित था कि उक्त चार उम्मीदवारों को लिखित और मौखिक परीक्षा के कुल में 50% या उससे अधिक अंक प्राप्त नहीं करने के बावजूद नियुक्त किया गया था। इसके अलावा, इन उम्मीदवारों की नियुक्ति बहुत पहले यानी अगस्त, 1995 में की गई थी।

(41)पक्षकारों की उपर्युक्त दलीलों और सरकार द्वारा अपनाए गए रुख को ध्यान में रखते हुए, हम यह देखने के लिए विवश हैं कि हरियाणा में संस्थागत घटकों की सर्वसम्मति पर विचार किया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 234 का उद्देश्य कम से कम उन बैचों के लिए इस शर्त को लागू नहीं करना था, नियमों के संशोधन के बाद ये सभी प्रश्न अप्रभावी हो जाते हैं। हम बबीता रानी बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (18) और ईआर कुलबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य, (19) के मामलों में इस न्यायालय के खंडपीठ के निर्णयों का भी उल्लेख कर सकते हैं, जहां यह कहा गया था कि

रिक्तियों को भरने के लिए असंशोधित नियम लागू होंगे। इस प्रकार, हमारा विचार है कि वर्तमान मामले में याचिकाकर्ताओं को आक्षेपित पत्र में निर्धारित शर्तों के प्रवर्तन के बिना नियमों द्वारा शासित किया जाएगा।

(42) उच्च न्यायालय की ओर से पेश वकील ने यह भी तर्क दिया कि याचिकाकर्ता विचाराधीन पदों पर नियुक्ति के लिए परमादेश की प्रकृति में रिट जारी करने का दावा नहीं कर सकते हैं और इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं द्वारा दावा की गई राहत अब इस स्तर पर कठिनाइयों से ग्रस्त है। हम इस निवेदन से प्रभावित नहीं हैं। याचिकाकर्ताओं ने बिना किसी अनुचित देरी के इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है। वास्तव में, वे राज्य सरकार के साथ अपने मामले को उठा रहे थे जो बदले में याचिकाकर्ताओं के दावे का समर्थन कर रही है और यह केवल 20 जुलाई, 2000 के पत्र के जारी होने के कारण है कि याचिकाकर्ताओं को नियुक्ति से वंचित कर दिया गया था। उनका चयन किसी भी वैधानिक नियमों या निर्देशों का उल्लंघन नहीं है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हमारा विचार है कि न तो याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर याचिकाएं न्यायाधीशों की दुर्बलता से ग्रस्त हैं और न ही याचिकाकर्ताओं का आचरण ऐसा है जो उन्हें इस न्यायालय से राहत का दावा करने से वंचित करे। याचिकाकर्ता सतर्क हैं और अपने कानूनी उपायों का पालन कर रहे हैं।

(43)अपने कामकाज के निर्वहन में उत्कृष्टता के प्रदर्शन के उच्च मानक न्याय के उचित प्रशासन के लिए दोहरे आवश्यक हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, संविधान के अनुच्छेद 234 के तहत उल्लिखित संवैधानिक प्राधिकारियों को अनिवार्य रूप से राज्य की न्यायिक सेवाओं में प्रतिस्पर्धी चयन और नियुक्ति के लिए नियमों के तर्कसंगत और उचित प्रवर्तन के संबंध में एक सर्वसम्मत दृष्टिकोण पर पहुंचना चाहिए। हमने स्पष्ट रूप से कहा है कि उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण पर सरकार और आयोग द्वारा निष्पक्ष रूप से और वरीयता के साथ विचार किए जाने की आवश्यकता है। सेवा में उत्कृष्टता बनाए रखने के लिए उच्च प्रतिशत का नुस्खा किसी भी तरह से समानता के अधिकार का उल्लंघन नहीं करता है।

---

(18) 2002 (2) पीएलआर 636

(19) 2002 (1) एस.सी.टी.

या नियुक्ति के लिए समान अवसर। बाल मुकंद साह (सुप्रा) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, हमारे लिए उच्च

न्यायालय की भूमिका और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए सुझाव को अपनाने के लिए राज्य की ओर से आवश्यकता पर फिर से जोर देना आवश्यक नहीं है। उद्देश्यपूर्ण परामर्श अनिवार्य रूप से परिणाम उन्मुख होना चाहिए, वस्तु प्राप्त करना और इसके विश्लेषण और निष्कर्ष को अत्यंत अभियान के साथ प्रभावी किया जाना चाहिए। यह केवल न्याय के उचित प्रशासन के हित में होगा।

(44) हमारी उपरोक्त चर्चा के निष्कर्षों को समाहित करने के लिए, हमारे समक्ष पार्टियों द्वारा उठाए गए विवादों पर वापस लौटना आवश्यक है। हमारा सुविचारित मत है कि दिनांक 5 मई, 2000 (20 जुलाई, 2000) के पत्र में न तो उच्च न्यायालय की ओर से क्षेत्राधिकार का अभाव था और न ही सक्षमता का। इसका उद्देश्य राज्य न्यायिक सेवाओं में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए उच्च मानक प्रदान करना था। यह आवश्यक नहीं था कि इस नियम के लागू होने से पहले नियमों में संशोधन किया जाना चाहिए था। हालांकि, विचार की सर्वसम्मति बताई गई शर्त के प्रवर्तन के लिए एक शर्त मिसाल थी। दिनांक 17 अप्रैल, 2003 की अधिसूचना द्वारा नियम में संशोधन किए जाने के परिणामस्वरूप अधिकांश प्रश्न अकादमिक हो गए हैं। वर्तमान मामले में, सरकार ने उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया था और लागू नहीं किया था जैसा कि आक्षेपित पत्र में निहित है और वास्तव में उसने इसके कार्यान्वयन पर विशिष्ट आपत्तियां उठाई थीं। इस प्रकार, इस पत्र को याचिकाकर्ताओं के हित के प्रतिकूल नहीं लिया जा सकता है, जिनके नाम सरकार द्वारा पत्र जारी करने से पहले उच्च न्यायालय रजिस्टर पर सूचीबद्ध करने के लिए भेजे गए थे। इसके विपरीत, न्यायालय के समक्ष आयोग और हरियाणा सरकार का रुख केवल याचिकाकर्ताओं के कारण को आगे बढ़ाता है। दिनांक 20 जुलाई, 2000 के पत्र के माध्यम से लगाई जाने वाली शर्तों के प्रभाव को पत्र के परंतुक द्वारा ही और अन्य संबंधित मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए रुख से और भी कम कर दिया गया है। याचिकाकर्ताओं को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के तहत किसी भी शत्रुतापूर्ण भेदभाव का सामना नहीं करना पड़ा है, लेकिन निश्चित रूप से उनके हितों को झटका लगा है क्योंकि पिछले वर्ष के लिए समान मानदंड और नियमों के तहत चुने गए उम्मीदवार को नियुक्त किया गया है और नियमों के अनुसार उनके चयन के बावजूद उन्हें नियुक्ति से वंचित कर दिया गया है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय के पत्र में निर्धारित शर्त को अधिक से अधिक भावी प्रभाव से लागू किया जा सकता है क्योंकि संबंधित वर्ष के लिए चयन की प्रक्रिया आक्षेपित पत्र जारी होने से पहले ही समाप्त हो चुकी थी।

(45)याचिकाकर्ताओं की ओर से उठाए गए तर्क में कहा गया है कि उन्हें साक्षात्कार में अविश्वसनीय रूप से उच्च मानक अंक प्राप्त करने होंगे यानी 120 में से न्यूनतम 105, इस तथ्य के बावजूद कि उन्होंने निर्धारित प्रतिशत के साथ लिखित परीक्षा उत्तीर्ण की है। इस तर्क में कोई दम नहीं है। वास्तव में, यह योग्यता के सिद्धांत और राज्य की न्यायिक सेवाओं में उच्च उत्कृष्टता के रखरखाव के लिए विनाशकारी है। एक उम्मीदवार जो पूरी तैयारी के साथ प्रतियोगी परीक्षा दे रहा है, उसे लिखित प्रतियोगी परीक्षा में केवल 45% अंक प्राप्त करना क्यों सुनिश्चित करना चाहिए? यदि वह अकेले उस मानक को प्राप्त करता है तो उससे साक्षात्कार (वाइव-वॉयस टेस्ट) में बहुत अच्छा प्रदर्शन करने की उम्मीद की जाती है। यदि वह इतना अच्छा प्रदर्शन करने में असमर्थ है तो उम्मीदवार के पास खुद के अलावा कोई और दोष नहीं है। उम्मीदवार की ओर से प्रयास और सहन अच्छा प्रदर्शन करने और जितना संभव हो उतना उच्च प्रतिशत हासिल करने के लिए होना चाहिए, बजाय इसके कि लिखित परीक्षा में 45% अंकों पर बेंच अंक तय किए जाएं। याचिकाकर्ताओं द्वारा दिया गया यह संख्यात्मक उदाहरण सेवा न्यायशास्त्र में योग्यता और परीक्षा के मौलिक सिद्धांत के विरोध में तर्क के मूल भ्रम से ग्रस्त है। नियमों में संशोधन से साफ पता चलता है कि लोक सेवा आयोग, सरकार और उच्च न्यायालय जैसी विशेषज्ञ संस्थाएं भी इस बिंदु पर एकमत हैं। यह आगे हमारे द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का एक सचेत निष्कर्ष देता है। इसलिए, हमें याचिकाकर्ताओं के इस तर्क को खारिज करने में कोई संकोच नहीं है।

(46)फलस्वरूप, हमारे द्वारा दर्ज किए गए कारणों के लिए, सुप्रा, हम इन रिट याचिकाओं को स्वीकार करते हैं और मानते हैं कि 5 मई, 2000 के पत्र (रिट याचिका के लिए 20 जुलाई, 2003 अनुलग्नक पी/5) को याचिकाकर्ताओं के खिलाफ लागू नहीं किया जा सकता है। हम राज्य सरकार को यह भी निर्देश देते हैं कि वह नियमों के अनुसार और बिना किसी अनावश्यक देरी के राज्य की न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति के लिए याचिकाकर्ताओं के मामले पर विचार करे। हालांकि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, पार्टियों को अपनी लागत को वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का

अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

लक्ष्य गर्ग

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

चरखी दादरी , हरियाणा